

लखनऊ ऐंजीडेन्सी का घेरा

श्रीचरण काला



सामाजिक विज्ञान एव मानविकी विभाग
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

प्रथम संस्करण

मार्च १९७२ चैत्र १८९४

P U 2 T

© राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, १९७२

मूल्य : दो रुपए

प्रकाशन विभाग में, सैयद ऐनुल आबेदीन, सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, राष्ट्रीय शिक्षा संस्थान भवन, श्री अरविन्द मार्ग, नई दिल्ली-१६ द्वारा प्रकाशित तथा न्यू इंडिया प्रिंटिंग प्रेस, खुरजा में मुद्रित ।

प्रस्तावना

पाठ्यपुस्तकों के अतिरिक्त, बालक की इच्छा कुछ और भी पढ़ने की होती है। हमारे देश में आजकल उसे जो कुछ पढ़ने को मिलता है वह प्रायः कोरी कल्पना तक ही सीमित रहता है। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् ने इस कमी को अनुभव किया है और कुछ रोचक पुस्तकों प्रकाशित करने की योजना बनाई है जिनमें कि बालकों का ज्ञानवर्धन हो सके और साथ ही उनमें स्वयं पढ़ने की प्रवृत्ति जाग्रत हो सके। यह कार्य सामाजिक विषय के क्षेत्र में सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी विभाग कर रहा है।

बालक का भावात्मक विकास सयत एवं सतुलित हो इस कार्य में सहायक पुस्तकों काफ़ी योग दे सकती है क्योंकि वे उसके जीवन, वातावरण, परिस्थितियों एवं समाज और पदार्थों का एक ऐसा रूप उपस्थित कर सकती है जो सयत हो, वास्तविक हो, सच्चा एवं सरल हो। जिसमें बालक स्वयं को रख कर अपने को देख, समझ और परख सके।

आज की विषम परिस्थितियों में ऐसी सहायक पुस्तकों का महत्व और भी बढ़ गया है जो बालकों में आत्म-विश्वास, आत्म-सम्मान और अनुशासन की भावना जाग्रत एवं विकसित कर सकें, जो उनमें राष्ट्रीय एकता के भाव भर सकें और उनमें देश-प्रेम की भावना जाग्रत कर सकें।

इन कुछ सिद्धांतों को सामने रख कर ये सहायक पुस्तकें तैयार की गई हैं। इनमें जो भी ज्ञान दिया गया है वह रुचिकर घटनाओं के माध्यम से सीधी, सरल एवं प्रभावोत्पादक भाषा में दिया गया है। बालकों की आवश्यकताओं, पठन-रुचियों और भावनाओं का भी पूरा-पूरा ध्यान रखा गया है।

मुझे आशा है ये पुस्तकें बालकों की ज्ञान-वृद्धि में सहायक होकर उचित भारतीय दृष्टिकोण का निर्माण करने में उपयोगी सिद्ध होगी।

स० वि० चंद्रशेखर अय्या

निदेशक

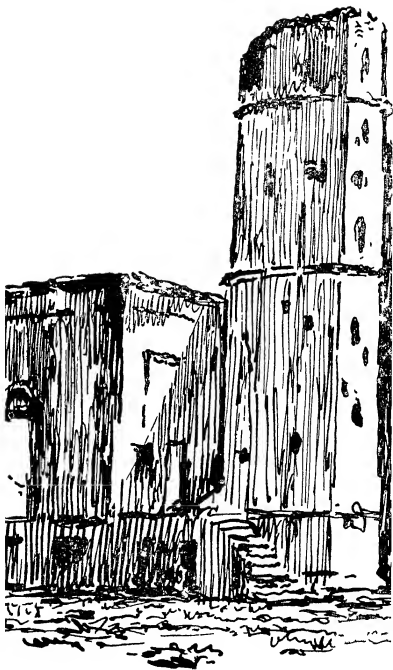
अगस्त १९७१

नई दिल्ली

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद

विषय-सूची

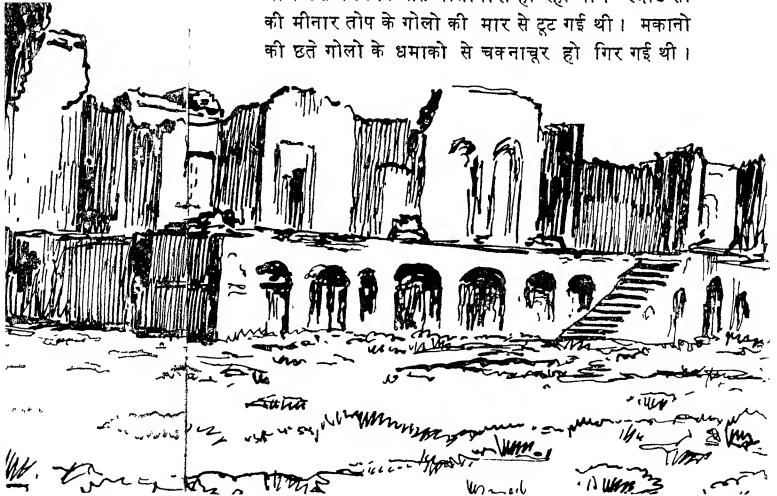
	पृष्ठ
सखनऊ रेजीडेन्सी	१
अवध का क्षुब्ध वातावरण	६
क्रांति की चिनगारी '	२०
युद्ध की तैयारी	३०
रेजीडेन्सी के घेरे में जीवन	३६
रेजीडेन्सी का मुक्ति प्रयास	५२
हेबलाक का अवध छोड़ना	६३
मददगार स्वयं घेरे के अंदर	६८
रेजीडेन्सी का सफल मुक्ति प्रयास	८१
सिंहावलोकन	९५



लखनऊ रेजीडेन्सी

लखनऊ रेजीडेन्सी सन १८५७ भारतीय
स्वतन्त्रता युद्ध का प्रथम सग्राम ।

अवध के क्रांतिकारियों ने लखनऊ रेजीडेन्सी को घेर रखा
था । उस पर दिन-रात गोलावारी हो रही थी । रेजीडेन्सी
की मीनार तोप के गोलों की मार से टूट गई थी । मकानों
की छतें गोलों के धमाकों से चकनाचूर हो गिर गई थी ।



दीवालें जगह-जगह टूट गई थी और सर्वत्र उन पर गोलो के निशान बन गए थे। रेजीडेन्सी के तमाम भव्य भवन खंडहर हो गए थे। आज भी वे खंडहर उसी दशा में विद्यमान हैं।

रेजीडेन्सी का यह घेरा पाँच महीने तक बना रहा और उस पर निरंतर गोलाबारी होती रही थी।

(लखनऊ रेजीडेन्सी नगर का प्रमुख दर्शनीय स्थान है। वह गोमती नदी के दाएँ किनारे एक टीले पर स्थित है। उसकी स्थिति की तुलना हीरे की कनी से की गई है। यह तैत्तिस् एकड़ क्षेत्र में फैला है, इसमें सोलह भवन थे। गोमती नदी के दाईं ओर लगभग तीन सौ गज चौड़ा मैदान है, जो क्रमशः रेजीडेन्सी के मध्य मैदानी भाग तक लगभग एक हजार फुट की ऊँचाई तक उठता हुआ चला जाता है। नदी के किनारे से रेजीडेन्सी पहुँचने के लिए हल्की चढ़ाई तय करनी पड़ती है।)

रेजीडेन्सी के समस्त भवन टीले के ऊपर चौरस मैदानी भाग में बने थे जिसके चारों ओर फैला हुआ ढालू मैदान था। इस कारण रेजीडेन्सी की किलेबंदी सरलता से की जा सकती थी। यदि मैदानी भाग की परिक्रमा की जाए तो हम देखेंगे कि ढालू भाग के प्रारंभ में ही उस समय की रक्षा पक्ति थी, जो मुनारो के द्वारा दिखाई गई है। इस पक्ति में खाइयाँ खोदी गई थी, दीवालें उठाई गई थी, उपयुक्त

स्थानों में तोपें लगाई गई थी और रक्षार्थ वचाव के अन्य उपाय किए गए थे। इस रक्षा पंक्ति में चार दिशाओं में चार प्रशस्त तोपखाने भी थे। ये तोपखाने ऐसे स्थानों पर लगाए गए थे, जहाँ से दूर-दूर तक सामने और दाएँ-बाएँ मार की जा सकती थी। पूर्व दिशा में गोमती की ओर रेडन का तोपखाना था। इससे नदी के किनारे के विस्तृत मैदान में गोलावारी की जा सकती थी। लोहे के पुल पर भी यहाँ की शक्तिशाली तोपों से गोलावारी की गई थी। जब सर हेनरी लारेन्स जो उस समय अवध का चीफ कमिश्नर था, चिनहट के युद्ध में क्रांतिकारियों से हार कर रेजीडेन्सी में शरण लेने के लिए भागकर आया था, तो क्रांतिकारी उसका पीछा कर रहे थे।

रेडन तोपखाने की मार के कारण क्रांतिकारी लोहे के पुल को पार नहीं कर पाए थे। रेजीडेन्सी के दक्षिण-पूर्व में बेली गार्ड, रेजीडेन्सी का प्रमुख द्वार था। इसके दाईं ओर बेली गार्ड तोपखाना था, जहाँ से उन पर मार की जा सकती थी, जो इस द्वार द्वारा अंदर घुसना चाहते थे।

रेजीडेन्सी के निवासियों के सहायताार्थ जब हेवलाक कानपुर से आया था तो वह इसी द्वार से रेजीडेन्सी में घुसा था। रक्षा पंक्ति के दक्षिण भाग में कानपुर तोपखाना था। दक्षिण-पश्चिम में गाविन का तोपखाना था। इनके अतिरिक्त कई स्थानों पर तोपों का प्रबन्ध किया गया था।

आवश्यकतानुसार आक्रमण होने पर ये तोपे हमले के स्थानों पर ले जाई जा सकती थी ।

रेजीडेन्सी का प्रमुख भवन स्वयं रेजीडेंट का तिमजिला निवास स्थान था । आज भी दूर से ही इसकी टूटी मीनार दिखाई देती है । यह मीनार मुख्य भवन से कुछ ही फुट अधिक ऊँची थी । इसमें दिन-रात सतरी तैनात रहते थे, जो दूर-दूर तक देख सकते थे कि कोई शत्रु तो निकट नहीं आ रहा है । यहाँ से शत्रु की गतिविधि पर देखरेख की जा सकती थी, यही कारण है कि मीनार पर सबसेप्रबल गोलावारी हुई थी । सबसे ऊँची मजिल तो करीब-करीब

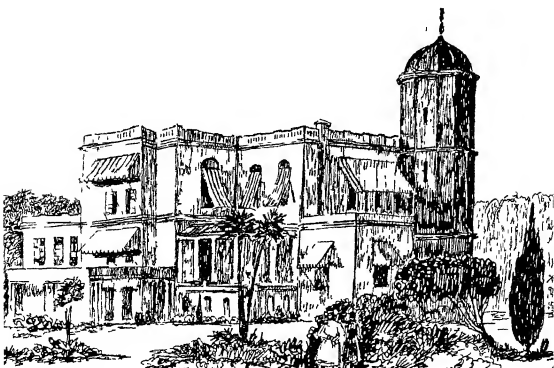
बेलीगार्ड, रेजीडेन्सी का मुख्य द्वार



गिर ही गई थी। यहाँ से निशानेबाज भी चुन-चुन कर शत्रुओं को मार सकते थे। यह मीनार अब सुरक्षित नहीं है। वह दर्शकों के लिए बंद कर दी गई है।

इसी मीनार से अग्रेजों का राष्ट्रीय झंडा यूनियन जैक फहराता था। विदेशी सत्ता का प्रतीक भला क्योंकर फहराने दिया जाता! वह स्वदेश-प्रेमियों की आँख की किरकिरी बन गया था। गोलियों की मार से वह देखते ही देखते छलनी हो गया था। उसे विवश होकर उतारना पड़ा था। रेजीडेन्सी के घेरे के काल में वह तहखाने में लिपटा

रेजीडेन्सी का एक भाग अपने मूल रूप में



पड़ा रहा। यह वही झंडा था जिसके विषय में विलायत के राष्ट्र-कवि लार्ड टेनीसन ने लिखा था कि वह क्रांति पर्यंत रेजीडेन्सी के ऊपर फहराता रहा था और क्रांति-कारियों को चुनौती देता रहा। लेकिन इस कथन को कवि की कल्पना ही मानना चाहिए।

रेजीडेंट के निवास स्थान के नीचे एक तहखाना था, जिस में घेरे के काल में अग्रेज औरते और बच्चे सिमटे पड़े रहते थे जिससे वे ग्रीष्म काल की गर्मी और गोलों की मार से सुरक्षित रह सकें। लेकिन तहखाने की सीलन के कारण वे स्वस्थ न रह पाए। दिन के समय भी तहखाने में इतना अँधेरा रहता था कि भोजन करते समय मोमबत्ती जलानी पड़ती थी।

तहखाने के ऊपर के कमरों में अब संग्रहालय बना दिया गया है, इसमें एक मिट्टी का मॉडल बना है, जो सन १८५७ की रेजीडेन्सी को उसी रूप में दर्शाता है। इसकी दीवारों पर तत्कालीन कलाकारों द्वारा बनाए हुए युद्ध के चित्र हैं।

इनको ध्यानपूर्वक देखने से हमें सन १८५७ की क्रांति के युद्धों के विषय में अनेक प्रकार की सूचनाएँ मिलती हैं। यहाँ वे अस्त्र-शस्त्र भी एकत्रित हैं जिनका प्रयोग इस युद्ध में हुआ था।

रेजीडेन्सी के मध्य भाग में एक मस्जिद है जो अन्य भवनों की

छह

अपेक्षा अच्छी दशा में है। इसके दो कारण हो सकते हैं। एक तो वह स्वतः ही रेजीडेन्सी क्षेत्र के मध्य भाग में होने से गोलों की मार से बच गई हो। दूसरा कारण यह भी हो सकता है कि धार्मिक स्थल होने के कारण क्रांतिकारियों ने उसे किसी प्रकार की क्षति न पहुँचाई हो।

रक्षा पक्ति की दक्षिण दिशा में मार्टिनियर की चौकी थी। इस चौकी का भार आंशिक रूप से स्थानीय ला मार्टिनियर कालेज के छात्रों पर था जिन्होंने अपने कर्तव्य का पालन वीरता से किया था। इस वीरता के कार्य के लिए वाद में उन्हें एक झंडा प्रदान किया गया था। यही पर ब्रिगेड मेस एव सिख स्कवायर था जहाँ सिख सवार एव सिख पैदल सेना रहती थी। पूर्व की ओर भोजन करने का कमरा था जो युद्ध काल में अस्पताल बना दिया गया था।

रेजीडेन्सी के क्षेत्र में जगह-जगह स्मारक बने हैं। इन्हें सैनिकों ने अपने उन साथियों की याद में बनाया था जो वीर गति को प्राप्त हुए थे। इनमें सबसे दर्शनीय और कला की दृष्टि से उत्कृष्ट सर हेनरी लारेन्स का स्मारक बना है।

रेजीडेन्सी के कब्रिस्तान की चर्चा किए बिना रेजीडेन्सी के घेरे की कहानी अपूर्ण रह जाती है। यहाँ उन अग्रज सैनिकों की कब्रें हैं जो क्रांतिकाल में युद्ध अथवा युद्धजनित अन्य

कारणों से मर गए थे। यहाँ उल्लेखनीय कब्र सर हेनरी लारेन्स की है जिसके उत्तम संगठन के ही कारण घेराव में आए हुए व्यक्ति पाँच माह का समय काट पाए थे। वह घेराव के प्रारम्भिक काल में ही एक गोले के लगने के कारण मर गया था। उसकी कब्र पर लिखा है—

यहाँ चिर निद्रा में लेटा है सर हेनरी लारेन्स,
जिसने अपने कर्तव्य-पालन की पूरी चेष्टा की थी।

यदि ये खडहर बोल सकते तो न जाने कितनी रोचक बातें हमें बता सकते। पर न ये बोल सकते हैं और न आप वीती ही सुना सकते हैं। किंतु इनको देखकर सन १८५७ के युद्ध के विषय में हम बहुत कुछ जान सकते हैं। दीवालों पर इच-इच की दूरी पर गोलों के निशान बने हैं। ये हमें बताते हैं कि रेजीडेन्सी पर कितनी भयंकर गोलाबारी हुई होगी।

रेजीडेन्सी के खडहर राष्ट्रीय निधि हैं। उनकी सुरक्षा का भार भारत सरकार पर है। भारतीय पुरातत्व विभाग पर देश के समस्त ऐतिहासिक भवनो की देखभाल एवं रक्षा का दायित्व रहता है। वह समय-समय पर इनकी मरम्मत भी करता है और उनको सुरक्षित रखता है।

अवध का क्षुब्ध वातावरण

लार्ड वेलेजली ने अन्य राज्यों की तरह ही अवध के साथ भी सहायक संधि की थी। इससे अवध का भी वही हाल हुआ जो सहायक संधि मानने वाले अन्य राज्यों का हुआ था। अवध में शासन व्यवस्था दिन पर दिन बिगड़ने लगी। अंतिम नवाब वाजिदअली शाह नाच-गाने और भोग-विलास में लिप्त रहने लगा। एक दिन उसे डलहौजी का पत्र मिला कि कुशासन के कारण उसका राज्य अंग्रेजी राज्य में मिला दिया जाता है। वाजिदअली शाह कर भी क्या सकता था। वह केवल हाथ मल कर रह गया।

और सन १८५७ की क्रांति के पंद्रह माह पूर्व अवध अंग्रेजी राज्य में मिला लिया गया। स्वाधीनता के खो जाने के कारण अवधवासी दुखी और असंतुष्ट थे। यह असंतोष और अधिक बढ़ा, जब उन्हें नए शासन द्वारा सुविधाएँ कम और असुविधाएँ ही अधिक मिलीं। अंग्रेजी शासन

मे दिन पर दिन सर्वसाधारण की कठिनाइयाँ बढ़ती गई ।

सर हेनरी लारेन्स को अवध का चीफ कमिश्नर बनाया गया था । उसमे मानवता थी । वह एक दूरदर्शी राजनीतिज्ञ भी था और नवाबी काल की कुव्यवस्था से परिचित था । उसने सिफारिश की कि अवधवासियों के साथ उदारता का व्यवहार होना चाहिए । 'नवाबी शासन की अपेक्षा हमे उन्हे अधिक सुविधाएँ देनी चाहिए । नए शासन से हमे आर्थिक लाभ नही उठाना चाहिए ।' लेकिन लालची कपनी अवध से दो करोड रुपया कर पाने के लिए लालायित थी । उसमे यह दूरदर्शिता कहाँ थी कि अवध मे स्थायी अंग्रेजी शासन स्थापित करने मे जनता का सहयोग लेती क्योंकि जनता की सद्भावना पर ही स्थायी राज्य स्थापित हो सकता था । कपनी ने तो यही सोचा था कि अंग्रेजी सेना की सहायता से वह अवध को अपने अधिकार मे रख लेगी । अतः नया शासन अवध की सर्वसाधारण जनता की सद्भावनाएँ प्राप्त न कर सका । विदेशी शासन अप्रिय हो गया ।

तत्कालीन इतिहासकार 'रीज' का भी यही मत है कि कपनी अपनी आमदनी बढ़ाने के लिए इतनी आतुर हो गई थी कि उसने जनता के सुख की कुछ भी परवाह नही की । टिकटों, अर्जियों, मकान, खाद्य पदार्थ एवं नौकाओं पर कर लगा दिए गए थे । अफीम, नमक, अनाज और स्पिरिट के ठेकेदार

दस

नियुक्त कर दिए गए थे। अफीम पर लगाए गए कर से तो पूरे अवध में बहुत असतोष फैला। लखनऊ नगर में यह असतोष सबसे अधिक था। इस नगर में चीनवासियों की भाँति लोग बहुत अफीम खाते थे। एकाएक अफीम पर कर लग जाने से गरीब लोग उसे खरीद न पाए। अफीम का दाम बढ़ गया। निराश होकर कई अफीमचियों ने अपना गला काट लिया। आदमियों की बात तो छोड़िए, उस समय बुलबुलो तक को अफीम खिलाई जाती थी। बुलबुलो को लडाना उस समय का प्रमुख मनोरंजन था। दैनिक आवश्यकता की प्रत्येक सामग्री पर कर लग जाने से, और बढ़ती हुई मँहगाई के कारण अवध के लोगों में असतोष बढ़ता ही गया।

विदेशी शासन के प्रति असतोष अवधवासियों तक ही सीमित न रहा, वरन् उसने अंग्रेजों द्वारा बनाई गई 'बंगाल सेना' के अवधी सिपाहियों को भी प्रभावित किया। बंगाल सेना में अवध के डेढ़ लाख सिपाही थे। ये सैनिक स्वयं भी अंग्रेजी सैनिक प्रशासन से सतुष्ट नहीं थे। अंग्रेज अधिकारियों के रवैये से उनको विश्वास हो गया था कि अंग्रेज सरकार उनका धर्म भ्रष्ट कर उन्हें क्रिस्तान बनाना चाहती है। कंपनी के सैनिकों के लिए एक नया कानून बना था कि नए रगरूटों को समुद्र पार कहीं भी लडने के लिए भेजा जा सकता है। उस समय के धार्मिक विश्वास के



बंगाल सेना के सिपाही

अनुसार समुद्र पार जाने से धर्म नष्ट हो जाता था। इससे उनका विश्वास और अधिक पुष्ट हुआ कि सरकार उनका धर्म परिवर्तन करना चाहती है। जब सैनिकों को बर्मा और अफगानिस्तान जाने की आज्ञा हुई तो बहुत से सिपाहियों ने छुट्टी ले ली और अनेक सेना छोड़ कर भाग गए। वे सिपाही जो युद्ध करने के लिए गए थे, लौटने पर जाति से बहिष्कृत कर दिए गए। वे अब अछूत समझे जाने लगे थे।

उनके सहधर्मी न तो उनसे बोलते, न मिलते और न ही किसी प्रकार का संसर्ग ही रखते थे। शुद्धि कराने में उनकी कई वर्षों की गाढ़ी कमाई स्वाहा हो जाती थी।

बंगाल सेना के एक-तिहाई सैनिक अवध के उच्च जाति के हिंदू थे। खान-पान, जाति-पाँति एवं विदेश यात्रा के प्रति उन पर कई धार्मिक बंधन लगे थे। सेना की नई व्यवस्था के अनुसार उनकी इन मान्यताओं पर आघात हुआ था।

ईसाई धर्म प्रचारक सार्वजनिक स्थानों में ईसाई धर्म का प्रचार करते थे। यदि वे केवल ईसाई धर्म के सिद्धांतों की ही चर्चा करते तो किसी को आपत्ति नहीं होती। लेकिन वे अपने प्रचार में हिंदू एवं मुस्लिम धर्म के प्रति कई अप्रिय एवं कटु बातें कहा करते थे। सर्वसाधारण की यह भावना थी कि ईसाई प्रचारकों पर कंपनी धन व्यय करती है, और राज धर्म होने के कारण उसे विभिन्न अधिकारियों से कुछ न

तेरह

कुछ सरक्षण अवश्य प्राप्त था। अब किसी को इसमें सशय नहीं रह गया था कि फिरगी उनका धर्म नष्ट करने पर तुले हुए हैं। चर्वी वाले कार्तूस ने इस असतोष में विस्फोट का काम किया। फील्ड मार्शल लार्ड रोबर्ट्स ने लिखा है कि कार्तूस वास्तव में गाय और सूअर की चर्वी से बनाए जाते थे।

सिपाहियों की धार्मिक भावना का कुछ भी विचार नहीं किया गया था। यह विश्वास करना कठिन है कि कार्तूस बनाने

चर्वी वाले कार्तूस ने असतोष में विस्फोट का काम किया



वालो से कोई भूल हुई हो। उस विषय में एक तत्कालीन तुकबंदी उल्लेखनीय है।

न ईरान ने किया, न शाह रूस ने,
अंग्रेज को तबाह किया कार्तूस ने।

अवध के चीफ कमिश्नर सर हेनरी लारेन्स ने उस समय के गवर्नर जनरल लार्ड केनिंग को ६ मई, १८५७ को एक पत्र लिखा—“पिछली रात्रि को अवध तोपखाने के एक जमादार के साथ मैंने बातचीत की। मुझे उसके इस विश्वास पर आश्चर्य हुआ कि पिछले दस वर्ष से सरकार समस्त अवध-वासियों को जबरन या धोखा देकर धर्म-परिवर्तन के कार्य में लगी हुई है। उसने हमारे किसी भी काम की सहायता नहीं की। वह बार-बार यही दुहराता रहा कि मैं तुम से वही कह रहा हूँ, जो सब कहते हैं।”

अंग्रेजों के प्रति घृणा और असंतोष की भावना ने बदला लेने की इच्छा को पुष्ट किया। सेना में इस समय अंग्रेज और भारतीय सिपाहियों का अनुपात एक और छ का था जो सेना में अनुशासन बनाए रखने की दृष्टि से ठीक नहीं था। इस विषय में एक गवर्नर जनरल ने शासन को चेतावनी दी थी कि भारत में अंग्रेज और भारतीय सैनिकों का अनुपात एक और तीन का अवश्य रहना चाहिए। सिपाहियों में यह भावना घर कर गई थी कि उन्होंने ही अंग्रेजों के लिए संपूर्ण

भारत को जीता है। फिर क्या उनमें अब वही शक्ति नहीं थी कि वे विदेशी सत्ता को उखाड़ फेंके, और अपने धर्म की रक्षा करें।

इस सकल्प को पूरा करने के लिए इस भविष्यवाणी ने भी योग दिया कि प्लासी के युद्ध के सौ वर्ष बाद भारतवर्ष में अंग्रेजी शासन का अंत हो जाएगा। अधविश्वासियों को पूर्ण विश्वास हो गया कि अब भारतवर्ष में अंग्रेजों के इने-गिने दिन ही रह गए हैं।

अंग्रेजों ने नवाबी सेना के साठ हजार सैनिकों की छूटनी कर दी थी। उनमें से बहुत कम सैनिकों को सशस्त्र पुलिस में नौकरी मिल पाई थी। नवाबी सेना से निकाले हुए ये सैनिक बेरोजगार हो गए थे। वे अपने गाँवों को लौट गए थे और अपने साथ अंग्रेजों के प्रति घृणा एवं दुर्भावना लेते हुए गए थे। अवध के प्रत्येक ग्राम में ऐसे व्यक्ति मिल सकते थे, जो विदेशी सत्ता के शत्रु थे, और जिन्हें व्यक्तिगत रूप से विदेशी शासन द्वारा हानि पहुँची थी। वे विदेशी राज्य के प्रति जहर उगला करते थे, और अपने सीमित क्षेत्र में विदेशी सत्ता के विरुद्ध प्रचार करते थे। वस समय आने पर उन्होंने अवध की जनता को संगठित किया, और सक्रिय रूप से अंग्रेजों के विरुद्ध हो गए।

जनता में असंतोष बढ़ने के कई और कारण भी थे। नई सोलह

शासन व्यवस्था में समस्त ऊँचे पद अंग्रेजों के लिए सुरक्षित हो गए थे। भारतीयों को केवल निम्न पद ही दिए जाते थे। इससे योग्य भारतीयों में विदेशी शासन के प्रति असंतोष फैला।

नवाबी संरक्षण में कारीगरों की रोजी अच्छी चलती थी परंतु विदेशी शासकों की रुचि भिन्न थी जिससे कारीगर बेकार हो गए और भूखों मरने लगे। उनकी बनाई हुई वस्तुओं के लिए खरीदार न रहे। नए शासन ने उनकी किसी भी प्रकार से सहायता नहीं की।

नवाबी शासन व्यवस्था में जमींदारों का अपना विशिष्ट स्थान था। वे राज्य के लिए भूमि कर वसूल करते थे, और अपने क्षेत्र में सुव्यवस्था भी बनाए रखते थे। अंग्रेजों ने अवध में जब भूमि का बदोवस्त शुरू किया तो वे यह मान कर चले कि भूमि का असली मालिक किसान था और जमींदारों ने जालसाजी से उनके अधिकारों को ले लिया था। इस कारण जमींदारों के कई गाँव छिन गए जिससे वे अंग्रेजों के कट्टर शत्रु बन गए।

मौलवी अहमदुल्लाह शाह क्रांतिकारियों के प्रमुख नायक थे। वह दक्षिण के रहने वाले थे लेकिन क्रांति के समय वे अवध में प्रचार कार्य करते थे। उन्होंने अवध में घूम-घूम कर अंग्रेजों के विरुद्ध क्रांति कराने के लिए हिंदुओं एवं

सद्वह

मुसलमानों को ललकारा था। उन्होंने चेतावनी दी थी कि समय आ गया है जब वे अपनी दासता की बेड़ियों को काट डालें या हमेशा के लिए दास बने रहें। वे ओजस्वी वक्ता थे। अवध के जनजागरण में उनका प्रमुख हाथ था। उनकी धारणा थी कि सशस्त्र विद्रोह की सफलता के लिए सेना से अधिक जनता के सहयोग की आवश्यकता है। वे फिरगियों के विरुद्ध धर्म युद्ध की घोषणा करते फिरते थे।

सन १८५७ का मई मास था। अवधवासी अंग्रेजों द्वारा स्थापित व्यवस्था से खिन्न एवं दुःखी थे। ऐसा कोई भी वर्ग नहीं था जो उनसे सतुष्ट हो। सर्वत्र असंतोष व्याप्त था। असंतुष्ट व्यक्ति प्रचार कर रहे थे। जनमत का संगठन हो रहा था। तरह-तरह की अफवाहें फैल रही थीं। नगर में हिंदी, उर्दू और फारसी में पोस्टर लगाए गए थे जिनमें हिंदुओं और मुसलमानों को ललकारा गया था कि समय आ गया है कि फिरगियों का विनाश कर दिया जाए। नगर के कई भागों में गुड्डों को विलायती कपड़े पहनाकर सार्वजनिक स्थलों में तलवार से उनका सिर काट दिया गया था। इससे लोगों में नया जोश पैदा हो जाता था और वे अंग्रेजों को मारने के लिए लालायित रहते थे।

मई २१ को सर हेनरी लारेन्स ने लिखा कि नगर में शांति है, लेकिन जनता में असंतोष है। यदि दिल्ली को तुरंत विद्रोहियों से वापस न ले लिया गया तो लखनऊ में अधिक

अठारह

समय तक शांति बनाए रखना कठिन होगा ।

कपनी के कर्मचारी भी भोग-विलास का जीवन व्यतीत करने लगे थे । उनमें वह योग्यता नहीं थी जो क्लाइव के समय में थी, जब क्लर्क एक हाथ में कलम और दूसरे हाथ में तलवार लेकर फैक्ट्री की रक्षा करता था । इस समय के अंग्रेजों में यह योग्यता नहीं रह गई थी कि वे क्रांति का सामना कर पाते । बिगड़ती हुई स्थिति को वे सही प्रकार से न तो समझ पाए और न ही समय आने पर उसका सामना कर पाए ।

इस प्रकार अवध की क्रांति ने जन-आंदोलन का रूप लिया और अवधवासियों की आशा और सघर्ष का केंद्र लखनऊ रेजीडेन्सी बनी ।

वातावरण क्षुब्ध हो गया था । जनता में गहरा असंतोष फैला था । अंग्रेजी राज्य को उखाड़ने के लिए वे दृढ़ संकल्प थे । स्थिति बिगड़ गई थी । वस, आवश्यकता थी केवल एक चिनगारी की ।

क्रांति की चिनगारी

अवध की क्रांति को प्रारम्भ करने के लिए प्रभावोत्पादक घटना का होना आवश्यक था। ऐसी घटना जो सर्वसाधारण का ध्यान अपनी ओर खींच ले, और अवध की विस्फोटक स्थिति को चिनगारी प्रदान कर सके। ऐसी घटना चिनहट का युद्ध था जिसमें क्रांतिकारियों ने अंग्रेजों को बुरी तरह से हराया था।

जून की विषम गर्मी थी। दिन भर गर्म जू चलती थी। रात की दम घुटाने वाली गर्मी में सोना कठिन हो गया था। जगह-जगह तरह-तरह की अफवाहें फैल रही थी। वातावरण में बेचैनी थी—कोई नहीं कह सकता था कि कब क्या हो जाए। आखिर वह दिन आ ही गया — ३० जून १८५७, जब क्रांतिकारी और अंग्रेज एक-दूसरे से लड़ ही बैठे।

अवध के चीफ कमिश्नर सर हेनरी लारेन्स को युद्धकालीन

परिस्थिति में ब्रिगेडियर का सैनिक पद भी दे दिया गया था। इस प्रकार वह अवध क्षेत्र का सर्वोच्च सैनिक एवं असैनिक अधिकारी था, और विषम स्थिति का सामना करने के लिए स्वतंत्रतापूर्वक निर्णय ले सकता था। हेनरी लारेन्स स्वयं योग्य व्यवस्थापक और दूरदर्शी व्यक्ति था, किंतु उसका सैनिक अनुभव कम था। रेजीडेन्सी की रक्षा के लिए वह स्वयं वहाँ आकर रहने लगा था।

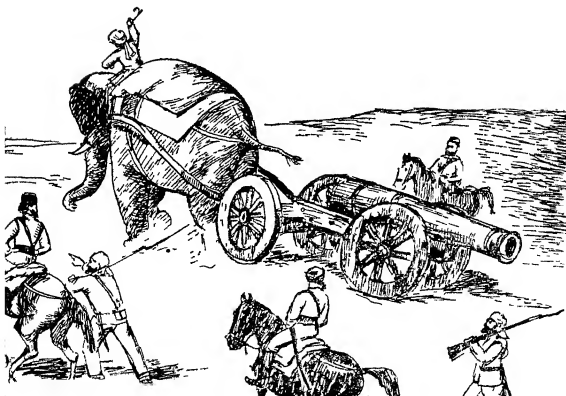
जून २६, लारेन्स को समाचार मिला कि चिनहट में क्रांतिकारियों की सेना एकत्र हो गई है। उस सेना में ५०० सैनिक, ५० घुड़सवार और एक छोटी तोप थी। लारेन्स ने भी एक सेना एकत्र की, जिसमें ३०० अंग्रेज सैनिक, १७० भारतीय पैदल सैनिक, ८४ भारतीय घुड़सवार सैनिक, ३६ स्वयंसेवक घुड़सवार, दस छोटी तोपें और एक बड़ी तोप थी, जिसे एक हाथी खींचता था।

सर हेनरी लारेन्स के लिए यह एक सुनहरा अवसर था। यदि वह क्रांतिकारियों को हराने में सफल हो गया, तो प्रारंभ में ही क्रांतिकारियों का हौसला पस्त हो जाएगा, और अंग्रेजी शक्ति की अजेयता का डका बज उठेगा। अतः यह निश्चय किया गया कि तीस जून को प्रातःकाल, पाँच फटते ही अंग्रेज फौज चिनहट की ओर प्रस्थान करेगी।

लेकिन कुव्यवस्था के कारण सेना तब रवाना हो सकी जब

सूर्य काफी चढ चुका था । सिपाहियों को सुबह नाश्ता भी न मिल पाया था । तीन मील चलकर सेना कुकरेल नदी के पुल पर पहुँची । सैनिकों की एक टोली को शत्रु की गति-विधि का परिचय पाने के लिए आगे भेजा गया, किंतु वे क्रांतिकारियों के बारे में कोई सूचना न दे पाए । कुछ राहगीरों ने भी यही समाचार दिया कि चिनहट में कोई क्रांतिकारी नहीं है । ऐसी स्थिति में लारेन्स को लौट जाना चाहिए था । फिर भी वह आगे बढ़ा । संभवतः वह चिनहट की जनता को अंग्रेजी शक्ति से प्रभावित करना चाहता था ।

बड़ी तोप जिसे हाथी खींचता था



दिन काफी चढ़ चुका था। सूर्य सिर पर आ गया था। जून की विकट धूप थी। दोपहरी की धूप में कदम-कदम चलना कठिन था। अपनी कसी हुई वर्दियों में सैनिक पसीने से लथपथ हो गए थे। ज्योंही सड़क के मोड़ को पार कर अंग्रेजी सेना आगे बढ़ी, उसने अकस्मात् अपने को क्रांतिकारियों से घिरा पाया। क्रांतिकारी सेना के सेनानायक बरकत अहमद ने बड़ी योग्यता से व्यूह रचना की थी। उसने अपनी सेना को आम के पेड़ों के पीछे इस भाँति छिपाया था कि न तो अंग्रेजों के स्काउट ही उनका पता लगा सकते थे और न राहगीर ही उनको देख सकते थे। अंग्रेजों को क्रांतिकारी सेना के अस्तित्व का तब पता चला, जब वह बुरी तरह से घिर गई। अपने आपको ऐसी स्थिति में पड़ा देख अंग्रेजी सेना निरुत्साहित हो गई, और उसमें बुरी तरह से भगदड़ मच गई। घिरी हुई सेना के पास बस एक ही चारा था कि वह भाग कर अपनी जान बचाए।

बरकत यह भली भाँति जानता था कि अंग्रेजी सेना भागकर कुकरेल के पुल से ही लौटेगी। उसके लिए उसने पहले से ही घुड़सवार सेना तैनात कर रखी थी, जो समय आते ही अंग्रेजी सेना को पुल पर घेर लेती। परंतु अंग्रेजों के स्वयंसेवक घुड़सवारों ने प्रबल आक्रमण किया जिससे पुल का रास्ता साफ हो गया और अंग्रेजी सेना वापस लौटने में सफल हो गई। जिस सुदरता के साथ बरकत अहमद ने

तेइस



अंग्रेजी सेना बुरी तरह घिर गई

चिनहट युद्ध की योजना बनाई थी, यदि उसी दक्षता से वह कार्यान्वित हो जाती तो एक भी अंग्रेज सैनिक उस दिन बचकर रेजीडेन्सी न लौट पाता ।

क्रांतिकारियों ने भागती हुई अंग्रेजी सेना का पीछा किया और उन पर गोलों की मार जारी रखी । जगह-जगह अंग्रेज सैनिकों की लाशें बिखर गई थी । उनके हथियार और साज-सामान सब बिखरे पड़े थे । कुछ गोली लगने से चौबिस

गिर पड़े थे तो कुछ बिना गोली के ही जून की तपती धूप से विलबिलाकर गिर पड़े थे। कई सैनिक प्यास और लू लगने से ही मर गए। कई स्थानों पर मार्ग में इन थके-माँदे, भागते हुए प्यासे सैनिकों को ग्रामीण महिलाओं ने पानी पिलाया जिससे उनमें कुछ जान आई और वे रेजीडेंसी की ओर भाग सके।

परन्तु अंग्रेजी सेना का पीछा करते हुए क्रांतिकारी गोमती पर बने पत्थर और लोहे के पुल को पार न कर सके।

क्रांतिकारियों ने भागती हुई सेना का पीछा किया



रेजीडेन्सी से लोहे के पुल पर भयकर गोलावारी की गई थी, और मच्छी भवन से पत्थर के पुल पर। मच्छी भवन उस स्थान पर था, जहाँ आज लखनऊ मेडिकल कालेज है।

क्रांतिकारी पुलो को तो पार न कर सके किंतु उन्होंने गोमती नदी को विभिन्न स्थानों से पार कर लिया और शाम होने तक उन्होंने रेजीडेन्सी को पूरी तरह से घेर लिया। निकटस्थ स्थानों में पहुँच कर उन्होंने रेजीडेन्सी में रहने वालों पर गोलावारी प्रारंभ कर दी।

अंग्रेजों की हार, उनका पीछा किया जाना और रेजीडेन्सी का घेरा इस तेजी से हुआ कि कुछ समय के लिए अंग्रेज अपनी सुध-बुध खो बैठे। उनकी समझ में न आया कि यह क्या हो गया है और उनको अब क्या करना है। रेजीडेन्सी के रहने वालों में हारी हुई क्षत-विक्षत सेना के लौटने से भय और निराशा फैल गई। एक अंग्रेज महिला लेडी इगलिस ने लिखा है—

“तुम समझ सकते हो कि सेना के हारे हुए व्यक्तियों के आने से किस सीमा तक निराशा हुई होगी। मैंने उनका लौटना ध्यानपूर्वक देखा था। वह दुःख देने वाला दृश्य था। वे किसी व्यवस्थित ढंग में नहीं लौट रहे थे। वे गिरते-पड़ते आ रहे थे। कोई घोड़े पर सवार था, तो कोई पैदल आ रहा था और कोई-कोई अन्य व्यक्तियों

का सहारा लेकर आ रहा था। कुछ घायल तोपों पर चढ़े आ रहे थे, और कुछ रेजीडेन्सी पहुँचते-पहुँचते थकान और घावों के कारण हमारी चौकी से आध मील की दूरी पर ही गिर पड़े थे। मैं नदी के पार क्रांतिकारियों और उनकी वदूकों का धुआँ स्पष्टतया देख पा रही थी। चिनहट की पराजय ने रेजीडेन्सी का घेरा समय से पूर्व करवा दिया था, जबकि उसकी किलेबंदी में भी बहुत सुधार करने वाली थी।”

यदि आक्रमणकारी उसी दिन रेजीडेन्सी पर धावा बोलते, तो यह संभव था कि वे खाइयों पर कब्जा कर लेते। लेकिन क्रांतिकारी इस स्थिति का लाभ न उठा पाए।

चिनहट के युद्ध के फलस्वरूप क्रांतिकारियों के हाथ पाँच छोटी तोपें व एक बड़ी होविट्जर तोप लगी, जिसे हाथी खींचता था। अंग्रेजों के २६३ सैनिक मारे गए थे और ७८ सैनिक घायल हुए थे।

उस रात्रि सर हेनरी लारेन्स ने रेजीडेन्सी से कानपुर के अंग्रेजी सेना के कमांडर हेवलाक को इस आशय का पत्र लिखा—

“आज सुबह हम शत्रु से लड़ने के लिए चिनहट गए और पराजित हुए। हमारी पाँच तोपें शत्रु के हाथ लगीं। क्रांतिकारियों ने हमारा पीछा किया और रेजीडेन्सी को पूर्णतया घेर लिया। क्रांतिकारियों का उत्साह बहुत बढ़ा हुआ है, और

सत्ताइस

कुछ अग्रेज हतोत्साहित हैं। कल के मुकाबले आज हमारी स्थिति दस गुना खराब है। वास्तविकता यह है कि हमारी स्थिति शोचनीय है। यदि पंद्रह-बीस दिन में हमें सहायता नहीं मिलती है तो हमें बहुत-सा राशन छोड़ना पड़ेगा और बारूद को भी जलाना पड़ेगा। इससे अधिक समय हम क्रांतिकारियों के सम्मुख टिक न पाएँगे।”

कर्नल इगलिस के समान अनुभवी सैनिक अधिकारी के रहते हुए भी, स्वयं सर हेनरी लारेन्स ने चिनहट के युद्ध में नेतृत्व किया था। ऐसा उन्होंने क्यों किया कहा नहीं जा सकता। सभवतः हेनरी लारेन्स में इगलिस की अपेक्षा आत्मविश्वास अधिक था। वह क्रांतिकारियों को युद्ध में हराने के लिए लालायित था और उनको सबक सिखाना चाहता था। रणनीति के अनुसार भी सबसे अच्छा बचाव पहले शत्रु पर चोट करना था। शत्रु को करारी हार देने के दो अन्य लाभ थे। क्रांतिकारियों का मनोबल टूट जाता और अग्रेजों के पक्ष में लोगों का हौसला बढ़ जाता। वे लोग जो निश्चय नहीं कर पा रहे थे कि किसका साथ दे, अब विजयी पक्ष का साथ देने के लिए बाध्य हो जाते। क्रांतिकारियों को हराकर वह आसपास के क्षेत्र में अग्रेजी शक्ति का प्रदर्शन कर सकता था, और ब्रिटिश शक्ति की धाक जमा सकता था। लेकिन पासा उल्टा पड़ा। वह बुरी तरह हारा। इस हार का समाचार बहुत तेजी से सारे अवध में

जगल की आग की तरह फैल गया ।

परिणाम यह हुआ कि दोनो दल भावी युद्ध की तैयारियाँ करने लगे । अंग्रेज अपने बचाव के लिए चिंतित थे और क्रांतिकारियों का उत्साह इतना बढ़ गया था कि वे अंग्रेजों को देश से निकाल कर ही मानेंगे । लखनऊ रेजीडेन्सी अवध की जनक्रांति का केंद्र-बिंदु बन गई ।

युद्ध की तैयारी

क्रांति से आठ माह पूर्व ही सर हेनरी लारेन्स सजग और सचेष्ट हो गया था। उसे भावी सकट का आभास हो चला था। अवधवासी अंग्रेजी सत्ता के विरुद्ध होने लगे थे। उसने चुपके-चुपके लंबे युद्ध की तैयारी प्रारंभ कर दी थी। लारेन्स अवध में अपनी सीमित शक्ति से भी भली भाँति परिचित था। यह असंभव था कि वह क्रांतिकारियों से खुलकर युद्ध करता। उसे तो रेजीडेन्सी में रहकर ही रक्षा करनी थी।

लखनऊ में कोई दुर्ग नहीं था जहाँ अंग्रेजी सेना, असैनिक अंग्रेज अधिकारी और उनके परिवार सुरक्षित रह पाते। लारेन्स के सामने सबसे बड़ी समस्या ऐसे स्थान को चुनना था, जो सामरिक दृष्टि से सबसे अधिक उपयुक्त होता, और जिसकी सरलता से किलेबंदी की जा सकती। उसे

दृष्टि

सबसे उपयुक्त स्थान रेजीडेन्सी और मच्छी भवन प्रतीत हुए । ये दोनों स्थान गोमती नदी के दाएँ किनारे पर, एक मील के अंतर पर ऊँचे टीलो पर बसे थे । मच्छी भवन अब नहीं रहा । उसके स्थान पर लखनऊ मेडिकल कालेज बन गया है । मच्छी भवन सामरिक दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण था । उसके विषय में कहा जाता था कि जिसका मच्छी भवन पर अधिकार है, उसका लखनऊ पर भी अधिकार है । रेजीडेन्सी और मच्छी भवन से नगर को जोड़ने वाले दोनों प्रमुख पुलों पर निगरानी रखी जा सकती थी, और शत्रुओं के आवागमन पर नियंत्रण रखा जा सकता था । उसने निश्चय किया कि अंग्रेज रेजीडेन्सी और मच्छी भवन से क्रांतिकारियों का सामना करे, किंतु सुविधा, सुरक्षा और विस्तार की दृष्टि से रेजीडेन्सी अधिक उपयुक्त स्थान था । यहाँ कई भवन थे जिनमें मेना एवं शरणार्थियों को रहने का स्थान मिल सकता था ।

चिनहट की हार के पश्चात् सर हेनरी लारेन्स ने अपने सीमित साधनों का विचार कर मच्छी भवन को खाली करने का निश्चय किया । क्रांतिकारी उसका उपयोग न कर पाएँ इसलिए उस भवन को बारूद से उड़ा दिया गया । उसने अपनी समस्त शक्ति को रेजीडेन्सी में संचित कर लिया था । वह अवधि में अंग्रेजी सत्ता का प्रतीक थी और क्रांतिकारियों की आँख की किरकिरी बन गई थी । रेजीडेन्सी में लंबे

घेरे से बचने के लिए समस्त सुविधाएँ जुटा ली गई थी । यदि हेनरी लारेन्स ने दूरदर्शिता से काम न किया होता, तो यह संभव था कि घेरे में आए हुए व्यक्तियों को कुछ ही दिन पश्चात भुखमरी के कारण आत्मसमर्पण करना पड़ता ।

रात्रि के अधिकार में कई माह तक अनाज, अस्त्र-शस्त्र, बारूद और लड़ाई का अन्य सामान जमा किया गया था । पशु भी पर्याप्त संख्या में एकत्र किए गए थे, ताकि घेरे में आए हुए व्यक्तियों को मांस की कमी न पड़े । तीन माह के लिए पशुओं के लिए चारा भी इकट्ठा किया गया था । साथ-साथ रेजीडेन्सी की किलेबंदी भी की गई थी । रेजीडेन्सी टीले पर थी, जिसके चारों ओर ढालू भूमि थी । टीले के ऊपरी मैदानी भाग की सीमा पर, जहाँ से ढालू भूमि प्रारंभ होती है, किलेबंदी की गई थी । जगह-जगह गहरी खाइयाँ खोदी गई थी । ऊँची-ऊँची दीवारें उठाई गई थी । पुरानी दीवारों की मरम्मत की गई और बुर्ज बनाए गए । रेजीडेन्सी के उत्तर और दक्षिण में तोपों के लिए जगह बनाई गई । प्रति-रक्षा के लिए मिट्टी की दीवारें बनाई गई । तख्तों पर कीले गाड़ी गई, और नुकीले भाग को ऊपर कर उन्हें ढालू जमीन में ठोक दिया गया, ताकि घुड़सवार सेना आक्रमण न कर सके । ढालू भूमि में गड्ढे किए गए और उनमें नुकीले खूंटें गाड़ दिए गए । इन बचाव के साधनों से आक्रमण होने पर तोपचियों को समय मिल सकता था और वे तोपों को खींच

बर्तिस

कर आक्रमण के स्थान पर ला सकते थे ।

ढालू भूमि पर कुछ खडहर एंव झोपडियाँ थी जिनमे क्रांतिकारी शरण ले सकते थे । वे दीवालो पर छेद कर रेजीडेन्सी पर गोलावारी भी कर सकते थे, और यहाँ से रेजीडेन्सी के अंदर सुरंगे बना सकते थे । अतः तीन हजार मजदूरों को वारूद और गैती-फावडा देकर इनको साफ करने में लगा दिया गया । कुछ वृक्ष भी निर्दयतापूर्वक काट दिए गए । सब से अधिक खतरा गोमती के किनारे के विस्तृत मैदान से था, जहाँ बड़ी सख्या में क्रांतिकारी आक्रमण के लिए एकत्र हो सकते थे । इसलिए इस तरफ सात फुट ऊँची मिट्टी की दीवाल बना दी गई थी, जिसको मजबूत करने के लिए दीवाल के अंदर लकड़ियाँ गाड़ दी गई थी । झब्बों में मिट्टी भरकर उन्हें पुश्तों के अंदर कर दिया गया था ।

बंगाल सेना के अवधी सैनिकों की पलटने लखनऊ में ही थी । वे भी अवध के व्यापक क्षोभ से प्रभावित थी । अतः हेनरी लारेन्स ने सितंबर १८५६ को अधिकारियों को लिखा कि लखनऊ से अवधी सैनिकों की पलटने सिख सैनिकों से बदल दी जाएँ । इसका परिणाम यह हुआ कि सिख सैनिकों ने अंग्रेजों का साथ अतः तक दिया ।

अवध के विभिन्न भागों से अंग्रेज अधिकारी एंव उनकी स्त्रियाँ और बच्चे रेजीडेन्सी में आश्रय लेने के लिए आ गए

थे। लखनऊ के ला मार्टिनियर कालेज के पढ़ह छात्र भी यहाँ आए थे। प्रातःकाल सब स्वस्थ असैनिक व्यक्तियों को कवायद कराई जाने लगी, और उन्हें शस्त्रों के प्रयोग की दीक्षा भी दी गई। ला मार्टिनियर कालेज के विद्यार्थी रेजीडेन्सी के दक्षिण-पूर्वी भाग की चौकी में तैनात किए गए थे। स्थिति विगड़ने पर वे भी युद्ध में हाथ बँटाते थे। उनका काम विशेषतः रेजीडेन्सी के विभिन्न भागों में समाचार लेकर जाना था। युद्ध काल में केवल दो विद्यार्थी घायल हुए थे।

अंग्रेजों को कुशल नेतृत्व प्राप्त था। देश के विभिन्न भागों में लड़े सैनिक अधिकारी एक दूसरे की गतिविधि और कठिनाइयों से परिचित थे। समय आने पर वे एक दूसरे की सहायता के लिए आ जाते थे।

क्रांतिकारी दल में आत्मविश्वास अधिक था। जनता अंग्रेजी शासन से छुटकारा पाने के लिए दृढ़ सकल्प थी। अवध के विभिन्न वर्गों के लोगों में विदेशी शासन के प्रति घोर असंतोष व्याप्त था।

क्रांतिकारियों को एक झंडे और एक नेता के नाम की आवश्यकता थी। अवध का अंतिम नवाब वाजिद अली शाह कलकत्ते में नजरबंद था। अंतः सैनिक समिति ने वाजिद अली शाह की बेगम हजरत महल के पुत्र ब्रिजिस कद को

झंडिस

सिंहासन पर बैठाया। ब्रिजिस कदर की आयु केवल ग्यारह वर्ष की थी। अतः राजकाज हजरत महल की देखरेख में होने लगा। ब्रिजिस कदर ५ जुलाई '९७ को सिंहासनारूढ़



बेगम हजरत महल

हुआ। रेजीडेन्सी का घेरा डालने वाले क्रांतिकारियों ने अंग्रेजों का साथ देने वाले हिंदुस्तानी सिपाहियों को सदेश भेजा—

“हमने अपने राजा को ताज पहना दिया है। फिरंगियों का

पेत्तिस

शासन अब समाप्त हो गया है। हम जल्दी ही आपके बेली गार्ड में पहुँचेंगे।”

इस सदेश का क्या प्रभाव हुआ, कहा नहीं जा सकता। यह अवश्य है कि अवध के समस्त असतुष्ट व्यक्ति नवाबी झंडे के नीचे आ गए थे। अवध का असतोष कंपनी के अवधी सैनिकों में तो फैल ही चुका था। सैनिक स्वयं भी सैनिक प्रशासन से असतुष्ट थे। कई प्रचारक असतोष को और अधिक भड़का रहे थे। कंपनी के अवधी सैनिक लगभग डेढ़ लाख थे। इस सख्या की वृद्धि नवाबी सेना के निकाले हुए सैनिकों ने की जो पचास हजार के लगभग थे और जिनकी रोजी नए शासन ने छीन ली थी। समय आने पर अवधी

अपने अग्रदूतों के साथ ब्रिजिस कद



सैनिकों ने विद्रोह किया और उनमें से अधिकांश लखनऊ के युद्ध में शामिल होने के लिए चले आए। वे अपने साथ सेना में से अस्त्र-शस्त्र, तोप, गोले और बारूद भी लेते आए।

अंग्रेजों के प्रशिक्षित सैनिक, उनके ही अस्त्र-शस्त्र, गोला-बारूद और उनके द्वारा ही उत्पन्न असतोष जब गहरे असतोष में परिवर्तित हुआ तो भारतीय प्रचारकों ने इसको विद्रोह के रूप में परिणत कर दिया। इसमें मौलवी अहमद उल्लाह शाह का प्रयास उल्लेखनीय है। अवध की जन-जागृति में उनका विशेष हाथ था।

अवध में जमींदारों की सख्या काफी थी। वे स्वयं अपने निजी सैनिक रखते थे और अपनी जमींदारी में पूरा सौब और किसानों पर अधिकार रखते थे। नए बंदोबस्त के कारण कई जमींदारों के गाँव छिन गए थे। उनके अधिकारों में कमी आ गई थी। उन्होंने भी क्रांतिकारियों का साथ दिया। उनके पास तीर चलाने वाले पासों थे जो सुरंग लगाने में भी प्रवीण थे।

लखनऊ रेजीडेंसी में अवध की जनक्रांति का केंद्र बन गया था। जगह-जगह से अंग्रेजों के शत्रु खिच-खिच कर यहाँ आने लगे थे। घिराव करने वाले इन लोगों का जमघट आधा लाख तक पहुँच गया था।

सैतिस

अवध की क्रांति को दवाने के लिए कानपुर की तरफ से ही अंग्रेजी सेना आ सकती थी। अतः कानपुर और लखनऊ के मध्य क्रांतिकारियों ने लगभग बारह चौकियाँ स्थापित कर रखी थी।

क्रांतिकारियों की एक बहुत बड़ी कमी थी। वे दूरदर्शी नहीं थे। निकटस्थ क्षेत्र के क्रांतिकारियों से भी उनकी कोई सह-योजना न थी और न ही उनमें किसी प्रकार का आपसी समझौता था। कठिन स्थिति के आने पर उन्होंने एक दूसरे की सहायता भी नहीं की। जिसका परिणाम यह हुआ कि किसी केन्द्रीय व्यवस्था के न होने के कारण वे एक-एक करके अलग-अलग पराजित हुए।

रेजीडेन्सी के घेरे में जीवन

चिनहट के युद्ध के पश्चात रेजीडेन्सी चारों ओर से घिर गई थी। वह अवधवासियों की आशा का केंद्र, और घेरे में आए हुए अंग्रेजों के लिए जीवन-मरण का प्रश्न बन गई थी। रेजीडेन्सी के घेरे में लगभग दो हजार व्यक्ति थे जिनमें लगभग ६२७ अंग्रेज सैनिक, ७०० भारतीय सिपाही, ७०० कुली और ६०० औरतें और बच्चे थे। सैनिक एवं वयस्क व्यक्तियों को कठिन सैनिक कार्य-भार सँभालना पड़ता था। कभी-कभी तो उन्हें सोलह घंटे तक लगातार ड्यूटी करनी पड़ती थी। वे बंदूक को वगल में रखकर वहीं पहरा ही सो जाया करते थे। स्थिति ही इतनी विकट थी। जरा सी ढील देने पर क्रांतिकारी रेजीडेन्सी पर कब्जा कर लेते और घेराव में आए हुए व्यक्तियों को मौत के घाट उतार देते। बचाव करने वाले व्यक्तियों की संख्या सीमित थी। प्रत्येक व्यक्ति को हर समय ड्यूटी के लिए लैस रहना पड़ता था।

उतालिस

पुरुष विभिन्न चौकियों में सुरक्षा कार्य में सलग्न रहते थे और अपने बाल-बच्चों को यदा कदा ही मिल सकते थे। औरतो और बच्चों को गोली की मार से सुरक्षित रखने के लिए, उन्हें रेजीडेन्सी के तहखाने में स्थान दे दिया गया था। तहखाने में सूर्य का प्रकाश कठिनता से प्रवेश पा सकता था, और हवा के प्रवाह के लिए भी कोई साधन नहीं था। यहाँ औरतो और बच्चे खचाखच भरे हुए थे। रेजीडेन्सी के क्षेत्र में स्थान के अभाव के कारण कोई और प्रबन्ध भी नहीं किया जा सकता था। यह भी संभव नहीं था कि संक्रामक रोगों के फैलने पर बीमारों को अलग स्थान दिया जा सके।

क्रांतिकारी दिन और रात रेजीडेन्सी पर गोलाबारी कर रहे थे। विभिन्न भवनो की दीवारों पर गोली की मार के बने निशान इतने अधिक और पास-पास थे कि उनकी तुलना चेचक से पीड़ित व्यक्ति के शरीर के दागों से की जा सकती थी। कब, कौन और किस समय गोली का शिकार हो जाए— यह घबराहट सदा बनी रहती थी। प्रतिदिन कई व्यक्ति गोली के शिकार होते थे। डायरी लिखने वालों को प्रतिदिन एक न एक दोस्त की मौत दर्ज करनी पड़ती थी। सात जुलाई को इतिहासकार रीज ने लिखा कि आज तक हमारे बहुत से लोग मारे गए। प्रतिदिन पंद्रह से बीस व्यक्ति तक मारे गए हैं। अधिकांश रायफल और बंदूकों की गोलियों के शिकार हुए हैं। बहुत से व्यक्तियों की मृत्यु एक अफ्रीकी

चालिस

की गोलियों से हुई है। उसका निशाना शायद ही कभी खाली जाता हो। यह अफ्रीकी नवाब वाजिद अली शाह की सेवा में था, और अपने अचूक निशाने के कारण रेजीडेन्सी के निवासियों द्वारा 'अचूक निशाने वाला बौव'। कहा जाने लगा था।

वास्तविकता यह थी कि रेजीडेन्सी के ऊपर मौत हर समय मँडरा रही थी। वह कब किसको उठा ले जाए। अस्पताल में भी सुविधाएँ इतनी कम थी कि घायल व्यक्ति के अच्छे होने की कोई आशा नहीं की जा सकती थी। ब्रिगेड मैस को अस्पताल बना दिया गया था। अस्पताल में विछावन के लिए तबुओं को काट कर कपड़े बनाए गए थे। घायल के आने पर उसकी कमीज को फाड़कर ही पट्टियाँ बना दी जाती थी। बलोरोफार्म के खतम हो जाने के कारण शल्य चिकित्सा के समय घायल व्यक्ति बुरी तरह चीखता और चिल्लाता था। कुछ व्यक्ति उसके सिर, हाथ, पैर और शरीर को दबाए रखते थे। दवा की कमी के कारण रूढ़े घावों में कीड़े उगने लगते थे। रेजीडेन्सी में जितने घायल व्यक्तियों के अंग काटने पड़े, उनमें से एक भी न जो पाया। उस समय तक कीटाणु नाशक शल्य औषधि का आविष्कार भी नहीं हुआ था।

गोलावारी इतनी भयंकर थी कि कब्रिस्तान में भी मृतक आसानी से दफनाए नहीं जा सकते थे। क्रांतिकारियों की

गोलियाँ वहाँ भी सक्रिय रहती थीं । रात्रि के अधिकार में जल्दी-जल्दी, शत्रुओं से बचकर मृतकों की अत्येष्टि क्रिया की जा सकती थी । कब्रों को गहरा नहीं खोदा जा सकता था । छिछली कब्रों में मरे हुए व्यक्ति गाड़ दिए जाते थे । कब्रिस्तान में चारों ओर दुर्गंध ही दुर्गंध फैल गई थी । वहाँ खड़ा रहना कठिन था । स्थिति दिन पर दिन बिगड़ती गई ।

हेनरी लारेन्स की मृत्यु के कारण रेजीडेन्सी में घिरे हुए व्यक्तियों का नेता चल बसा था । इससे घिरे हुए व्यक्तियों का मनोबल कम हो गया था । हेनरी लारेन्स मरते समय बुदबुदाया था कि मैंने अपने कर्तव्य-पालन की पूरी चेष्टा की है । रेजीडेन्सी के कब्रिस्तान में उसकी कब्र बनी है जिस पर लिखा है—

यहाँ चिर निद्रा में लेटा है सर हेनरी लारेन्स,
जिसने अपने कर्तव्य-पालन की पूरी चेष्टा की थी ।

रेजीडेन्सी का घेरा अभेद्य हो गया था । इसलिए रेजीडेन्सी के लोगों का वाह्य ससार से कोई संबंध नहीं रह गया था । उन्हें उसी सामान और सुविधाओं पर जीवन बसर करना था, जिन्हें सर हेनरी लारेन्स ने एकत्र कर रखा था । ताजी तरकारियों का अभाव विशेष रूप से खटकने लगा था । रेजीडेन्सी में सूखे रोग से इतने अधिक व्यक्ति पीड़ित हुए थे कि उसे लखनऊ रेजीडेन्सी की बीमारी कहा जाने लगा

लगा था। कई बच्चे दूध की कमी के कारण असमय ही काल के मुँह में चले गए थे। जुलाई २२ से बच्चों को जौ का दलिया दिया जाने लगा था। राशन में क्रमशः कटौती की जाने लगी थी। नमक का मिलना भी कठिन हो गया था। वस्त्रों के अभाव में मरे हुए व्यक्तियों के कपड़े पहने जाने लगे थे। तवाकू मिलना कठिन था। विभिन्न प्रकार की पत्तियों का प्रयोग तवाकू के रूप में होने लगा था।

युद्ध और लंबे घेरे की अनिश्चितता से घबरा कर रेजीडेन्सी के नौकर भाग निकले थे। इस काल में अंग्रेज नवाबों की भाँति रहने लगे थे। प्रत्येक अधिकारी के पास बीस से लेकर तीस तक नौकर थे। उनकी स्त्रियाँ काम करने की आदी नहीं रही थी। नौकरों के अभाव में औरतों को विशेष कष्ट का सामना करना पड़ा। अब उन्हें सब काम स्वयं ही करना पड़ता था।

क्रांतिकारी घेरे को क्रमशः दृढ़ करते गए। ज्यों-ज्यों दिन बीतते गए क्रांतिकारियों की संख्या भी बढ़ती गई। कुछ स्थानों पर घेरा डालने वाले सिपाही रक्षा पक्ति के भीतर के सैनिकों के इतने समीप आ गए थे कि वे आपस में बात-चीत कर लिया करते थे। क्रांतिकारी सैनिक अंग्रेजों का साथ देने वाले भारतीयों को 'धर्म त्यागी' कहकर उलाहने देने लगे थे।

भोजन की कमी घेरे में आए हुए व्यक्तियों को दिन पर दिन

तैतालिस

खटकने लगी थी। अन्य सुविधाएँ भी क्रमशः कम होती गईं। अन्न जीवन के लिए आवश्यक था, किंतु उन लोगों के लिए जीवन तभी संभव हो सकता था जबकि घेरे से कोई उनको उबारता। घेरे के अंदर सब लोग इस समाचार के लिए लालायित थे कि कानपुर स्थित सेना का अध्यक्ष हेवलाक उनकी सहायता के लिए कब पहुँचे और घेरे की यातना और अनिश्चितता से छुटकारा दिलाए। हेवलाक भी भली भाँति जानता था कि रेजीडेन्सी के तख्त लोगों की आँखें उस पर लगी हैं। वह सोचता, क्या वह इस गुरतर भार को उठा सकेगा? हेवलाक के साधन सीमित थे, और कार्य कठिन था। लेकिन फल कुछ भी हो, उसे तो कर्म करना ही था। उसे बार-बार रेजीडेन्सी से सहायता के लिए प्रार्थना आ रही थी। रेजीडेन्सी के निवासियों का वाह्य ससार से किसी प्रकार का संपर्क नहीं रह गया था। न बाहर की खबर अंदर आ सकती थी और न अंदर की खबर बाहर ही जा सकती थी। समाचार लाने और ले जाने का काम दो भारतीय जासूस अगद तिवारी और मिसिर कनौजी लाल करते थे। अगद को प्रति फेरे का पाँच सौ पौंड धन दिया जाता था। उसी के द्वारा हेवलाक से पत्राचार संभव था। अगद को कानपुर में नाना साहब की गतिविधि पर निगरानी रखने के लिए भेजा गया था। वहाँ से लौटकर उसने समाचार दिया कि हेवलाक गंगा नदी को पार करने की तैयारी में है। वहाँ से चलकर वह रेजीडेन्सी की सहायता

के लिए जरूर आएगा। २२ जुलाई को रेजीडेन्सी के कमांडर इगलिस ने अगद को निम्नलिखित समाचार लेकर हेवलाक के पास भेजा

“... मैं आपको सूचित करता हूँ कि क्रांतिकारी हमारी किलेबंदी की दीवारों तक आ गए हैं, और दिन-रात निरंतर हम पर गोलाबारी कर रहे हैं। मैं विश्वास करता हूँ कि आप शीघ्र से शीघ्र हमारी सहायता के लिए आएँगे।”

यह सदेश अंग्रेजी में लिखा गया था। उसका कुछ भाग ग्रीक भाषा में था। यदि क्रांतिकारियों के हाथ यह सदेश पड़ भी जाता तो भी वे उसे समझ न सकते थे। अगद इस सदेश को हुक्के की नली में छिपा कर ले गया था। इस पत्र को पढ़ने से माझूम होता है कि रेजीडेन्सी का कमांडर इगलिस चिंतित था परंतु उसे किसी प्रकार की धवराहट न थी। उसे आशा थी कि निकट भविष्य में मदद मिल जाएगी। तीन दिन पश्चात् २५ जुलाई को अगद हेवलाक का यह सदेश लेकर लौटा था “हमारी दो-तिहाई सेना गंगा नदी के पार आ गई है। आठ तोपें भी नदी को पार कर चुकी हैं। हमारे पास उन सबको नष्ट करने के लिए पर्याप्त सेना है, जो हमारा विरोध कर रहे हैं। पाँच या छः दिन में हम तुमसे आ मिलेंगे।”

इस समाचार से रेजीडेन्सी में नई आशा का संचार हुआ।

पैतानिस

वे सोचने लगे कि घेरे के कण्ट से छुटकारा मिलने ही वाला है। कह नही सकते कि हेवलाक ने आत्म विश्वास से परिपूर्ण यह पत्र किस आधार पर लिखा था। रेजीडेन्सी के निवासियों की आशा तो मृग-तृष्णा मात्र थी। वह दिवस तो अभी बहुत दूर था। उन्हें कई माह के पश्चात छुटकारा मिला। एक दिन विश्राम करने के पश्चात २७ जुलाई को अगद फिर हेवलाक के लिए एक सदेश एव लखनऊ क्षेत्र का विस्तृत मानचित्र लेकर चला। यह लखनऊ नगर, एव रेजीडेन्सी तक पहुँचने का नक्शा था, जिसका प्रयोग हेवलाक रेजीडेन्सी तक पहुँचने में कर सकता था। ब्रिगेडियर इगलिस का सदेश इस प्रकार था

“रेजीडेन्सी नगर की सीमा से लगभग डेढ़ मील दूर है। हम आपके आने वाले मार्ग की दाईं एव बाईं तरफ स्थित क्रांतिकारियों की मजबूत चौकियों पर अपने स्थान से पंद्रह सौ गज की दूरी तक गोलाबारी कर सकते हैं। आपके मार्ग के दोनों तरफ मकान हैं और इस सड़क से भारी तोपों को ले जाने में कठिनता होगी।”

तत्पश्चात प्रत्येक रात्रि को आठ बजे रेजीडेन्सी के लोग दक्षिण आकाश की ओर आशा भरी दृष्टि से देखते थे। हेवलाक ने सूचित किया था कि नगर में घुसने से पहली रात्रि को आकाश में राकेट छोड़ कर वह अपने आने और रेजीडेन्सी पर तथाकथित आक्रमण की सूचना देगा। वह

छियालिस

आशा करता था कि अगले दिन रेजीडेन्सी से क्रांतिकारियों की सशक्त चौकियों पर गोलावारी की जाएगी। ताकि क्रांतिकारियों का ध्यान हेवलाक की सेना से हट जाए।

दक्षिण आकाश की तरफ देखते-देखते लोगो की आँखें पथरा गई, लेकिन राकेट न दिखे। रीज ने इन शब्दों में रेजीडेन्सी के निवासियों की निराशा को प्रतिविवित किया है।

“सत्ताइस तारीख भी चली गई। कोई सेना न आई। अट्ठाइस भी चली गई और कोई सहायता नहीं मिली। उतिस, तीस और इकतिस तारीख भी निकल गई और हमारी सहायता के लिए आने वाली किसी सेना का कोई पता नहीं। हम आशा लगाए बैठे थे कि हमारे मित्र शीघ्र ही आएँगे और विद्रोहियों को मार भगाएँगे। परंतु यह सब नहीं हुआ। हमारे दिल बैठने लगे। लोगों में उदासी छा गई। जीवन के प्रति वे निराश हो चुके थे, और मारे जाने से पूर्व केवल मारने की उन्हें इच्छा थी। उनका जीवन उनके लिए भार स्वरूप हो गया था।”

अगस्त १५ को हेवलाक का लिखा हुआ सदेश इंगलिस को मिला। यह ग्यारह दिन पूर्व ही लिखा जा चुका था। हेवलाक ने लिखा था :

“हम कल सुबह लखनऊ के लिए रवाना होंगे। हमारे सैनिकों की संख्या बढ़ गई है। तुम तक पहुँचने में हमें

सैतालिस

अधिक मे अधिक चार दिन लगेगे । तुम्हे हमारी हर प्रकार से सहायता करनी चाहिए । यदि हम रेजीडेन्सी मे घुस न सके, तो तुम्हे दुश्मनो के घेरे को काट कर हम से आ मिलना चाहिए ।”

इस सदेश को पढकर ब्रिगेडियर इगलिस को ऐसा प्रतीत हुआ कि हेवलाक उसकी कठिन परिस्थिति को समझ नहीं रहा है । उसने हेवलाक को लिखा

“यह असंभव है कि मैं अपनी कमजोर और क्षत-विक्षत सेना को सहारे रेजीडेन्सी की किलेबंदी को छोड़ सकूँ । आपको यह ध्यान मे रखना चाहिए कि मैं किस कठिनाई मे पड़ा हूँ । मेरे पास १०० के ऊपर वीमार और घायल है, २२० स्विचों तथा २३० बच्चे हैं । किसी भी प्रकार की गाड़ी नहीं है । तीस तोपों को और तेईस लाख के खजाने को छोड़ना पड़ेगा । फिलहाल सेना का राशन आधा कर दिया जाएगा । इस कटौती के कारण हमारी भोजन सामग्री दस सितंबर तक चल जाएगी । यदि आप इस सेना को बचाना चाहते हैं तो बिना समय नष्ट किए, आगे बढ़िए । शत्रु प्रति-रक्षा पवित से कुछ ही गज की दूरी पर है और प्रतिदिन आक्रमण करता रहता है । शत्रु की सुरगो ने हमारी चौकी को पहले से ही असुरक्षित कर दिया है । मुझे पूर्ण विश्वास है कि आगे भी वे सुरगो लगाते रहेगे ।

“करीब पच्चीस दिन पूर्व हमारी देशी सेना को यह विश्वास अड़तालिस

दिलाया गया था कि आप जल्दी पहुँच रहे हैं। यह सेना अब विश्वास खो रही है। यदि ये चले जाएँगे तो हम नहीं जानते कि रक्षा के लिए आदमी कहाँ से आएँगे।”

रेजीडेन्सी को घेरे में आए हुए लगभग पैंतालिस दिन हो गए थे। एक माह से उनके पास कई आश्वासन आ गए थे कि कुछ ही दिनों में छुटकारा मिल जाएगा। लेकिन यह मुक्ति दिवस मृग-तृष्णा की भाँति दूर ही हटता गया। आशा निराशा और आशा सतत रेजीडेन्सी के निवासियों को वारी-वारी से हर्षित और चिंतित करते रहे। कभी जीवन की आशा बँध जाती थी और कभी मौत की झलक दीखने लगती थी। हेवलाक के आने में जितनी ही अधिक देर हो रही थी, उतनी ही घेरे में आए हुए व्यक्तियों की कठिनाइयाँ भी बढ़ती जा रही थी। यह उनके लिए मृत्यु एवं जीवन का प्रश्न था।

बारह दिन के पश्चात अर्ध रात्रि में, २८ अगस्त को अगद एक सदेश हेवलाक से लाया। उसमें हेवलाक ने उन्हें राजपूतों की भाँति केसरिया वाना पहनकर अंतिम समय तक लड़ते हुए मर मिटने की सलाह दी थी—

“मुझे तुम्हारा सोलह अगस्त का पत्र मिला है। मैं तुम्हें यही राय दे सकता हूँ कि क्रांतिकारियों से समझौता मत करो। यदि आवश्यकता हो तो तलवार लेकर क्रांतिकारियों का सामना करते हुए जीवन बलिदान कर दो। वीस या

पच्चीस दिन मे मुझे और सैनिक मिल जाएँगे, और मै यथा-शक्ति लखनऊ पहुँचने का प्रयत्न करूँगा ।”

इस पत्र को पाकर रेजीडेन्सी मे और निराशा छा गई । लोग सोचने लगे थे कि सहायता कभी न आएगी । जब घेरे-बंदी को पूरे साठ दिन हो गए थे, तो हेवलाक, जिसे वे अपना तारनहार समझ रहे थे, उन्हें पच्चीस दिवस की और यातना भोगने के लिए कह रहा था । कौन कह सकता था कि पच्चीस दिन मे सहायता मिल ही जाएगी । क्या इससे पूर्व भी सहायता के कई सदेश न आ चुके थे ? लखनऊ के घेरे मे आए हुए व्यक्तियों को विश्वास नही हो पा रहा था, कि लखनऊ और कानपुर की ५३ मील की दूरी को पार करने के लिए हेवलाक को पूरे नौ सप्ताह चाहिए ।

रेजीडेन्सी मे राशन आधा कर दिया गया था और इधर क्रांतिकारी दिन पर दिन सशक्त होते जा रहे थे ।

हेवलाक की भी स्वयं अपनी कठिनाइयाँ थी । उसके पास केवल पंद्रह सौ सैनिक थे और दस छोटी तोपें थी । कानपुर और लखनऊ के बीच क्रांतिकारियों की लगभग बारह चौकियाँ थी और लखनऊ का युद्ध भी लडना था । हेवलाक ने लखनऊ से आए मानचित्र का अध्ययन किया । वह हाथ मल कर रह गया । उसने कहा—“संभवत दस हजार व्यक्ति लखनऊ ले सकते हैं, इससे कम नही ।”

लखनऊ रेजीडेन्सी की घेरेबदी को ८८ दिन हो गए थे । ब्रिगेडियर इगलिस हतोत्साहित हो गया था । उसने क्रांतिकारियों से समझौता करने का प्रयत्न किया, लेकिन क्रांतिकारी समझौते के लिए तैयार नहीं हुए । सैनिकों की संख्या घट कर १७२० से ८७८ हो गई थी । क्या सहायता कभी आ भी पाएगी ? इससे पूर्व उन्हें निम्नलिखित आश्वासन मिले थे—

जुलाई २५, पाँच या छ दिन में हम तुम से आ मिलेंगे ।
अगस्त १५, अधिक से अधिक हमें तुम तक पहुँचने में चार दिन लगेंगे ।

अगस्त २८, बीस या पच्चीस दिन में मुझे और सैनिक मिल जाएँगे, और मैं यथाशक्ति लखनऊ पहुँचने का प्रयत्न करूँगा ।

२५ सितंबर को हेवलाक का कोई आशावादी संदेश तो नहीं मिला, किंतु तोप के गोलों की आवाज ने रेजीडेन्सी के निवासियों में आशा का संचार किया । उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ कि तोपें कह रही हैं कि हम तुम्हारी मदद के लिए आ रहे हैं ।

रेजीडेन्सी का मुक्ति प्रयास

रेजीडेन्सी के घेरे में आए हुए व्यक्तियों से हेवलाक को कई संदेश मिल चुके थे कि 'जान बचाओ' और 'भूखे मरने से बचाओ'। हेवलाक कानपुर क्षेत्र का कमांडर था। कानपुर लखनऊ से सबसे निकटस्थ सैनिक केंद्र था। दोनों नगरों के बीच केवल ५३ मील की दूरी थी। हेवलाक भी अपनी जिम्मेदारी को भली भाँति समझता था। उसे रेजीडेन्सी की सहायता के लिए पहुँचना ही था। रेजीडेन्सी के नेता सर हेनरी लारेन्स की मृत्यु के कारण रेजीडेन्सी के निवासी और अधिक असहाय हो गए थे। लारेन्स की मृत्यु से हेवलाक का सकल्प और अधिक दृढ़ हुआ कि उसे रेजीडेन्सी के घेरे में आए हुए व्यक्तियों को हर हालत में बचाना ही चाहिए। वह रेजीडेन्सी के उद्धारक होने का श्रेय लेना चाहता था।

हेवलाक भली भाँति जानता था कि यदि वह समय पर रेजीडेन्सी की मदद के लिए नहीं आ पाया, तो वहाँ के

निवासियों के भाग्य का निपटारा दो ही प्रकार से होगा। या तो वे क्रांतिकारियों द्वारा मौत के घाट उतार दिए जाएँगे, या वे भूखे मर जाएँगे।

लखनऊ रेजीडेन्सी सामरिक एक राजनैतिक दृष्टि से क्रांतिकारियों और अंग्रेजों के लिए समान महत्व रखती थी। वह अवध की क्रांति का केंद्र-बिंदु थी। अंग्रेजों द्वारा रेजीडेन्सी के घेरे का अंत कर दिए जाने पर क्रांतिकारियों के अवध के मोर्चे का अंत हो जाता, और अंग्रेजों का प्रभाव पुनः स्थापित हो जाता। दोनों दलों के लिए रेजीडेन्सी पर अधिकार महत्वपूर्ण था।

कई अंग्रेज सैनिकों ने बाद में सर हेनरी लारेन्स की आलोचना की थी कि उसे अवध छोड़ देना चाहिए था। रेजीडेन्सी को खाली कर उसे अपनी सेना सहित कानपुर आ जाना चाहिए था। इससे दो लाभ होते। कानपुर और लखनऊ की सम्मिलित सेना कानपुर-कालपी-झाँसी क्षेत्र में अधिक सक्रिय होती। रेजीडेन्सी के घेरे में आए हुए व्यक्ति भी घेरे की यातना से बच जाते। इस विचार के विरुद्ध यही कहा जा सकता है कि लखनऊ को छोड़ देने पर अंग्रेजी सत्ता को अवध में भारी धक्का लगता।

वे क्रांतिकारियों की दृष्टि में भगोड़े साबित होते। क्रांतिकारियों का हौसला और अधिक बढ़ता। दिल्ली अंग्रेजों के हाथ से पहले ही निकल चुकी थी। लखनऊ छोड़

निरपन

देने पर, अवध के ऐसे व्यक्ति जो निश्चय नहीं कर पा रहे थे कि किस पक्ष का साथ दे, अव क्रांतिकारियों के पक्ष में आ जाते। लखनऊ न छोड़ने का निश्चय सामरिक दृष्टि से उचित ही था।

हेवलाक लखनऊ के मुक्ति प्रयास की कठिनता भली भाँति समझता था। संपूर्ण अवधवासी अंग्रेजों के विरुद्ध थे। स्थानीय जनता से उसे किसी भी प्रकार की सहायता नहीं मिल सकती थी। कानपुर और लखनऊ की दूरी अधिक तो नहीं थी, लेकिन इन दो नगरों के मध्य क्रांतिकारियों की सशक्त चौकियाँ थी। हेवलाक के पास पर्याप्त सेना भी नहीं थी, और न उसे भावी युद्ध में आहत सैनिकों की पूर्ति की ही आशा थी। इन कठिनाइयों के होते हुए भी उसे लखनऊ की ओर बढ़ना ही था। वह भली भाँति जानता था कि लखनऊ रेजीडेन्सी के घेरे में आए हुए व्यक्ति उसे अपना बचाने वाला समझ रहे हैं। उनकी आँखें उस पर लगी हैं। वह उनकी आशाओं पर तुषारापात नहीं कर सकता था।

कानपुर गंगा नदी के किनारे बसा है। लखनऊ की ओर प्रस्थान करने के लिए उसे सर्वप्रथम गंगा नदी को पार करना था। उसने नावों का पुल बनाना प्रारंभ किया। सामरिक दृष्टि से इस पुल का महत्व था। इसके द्वारा कानपुर से लखनऊ की ओर यातायात संभव हुआ। पुल के बनने में कई दिन लगे। एक महत्वपूर्ण प्रश्न उठता है कि

चव्वन

क्रांतिकारी इस समय क्या कर रहे थे ? न तो कानपुर के क्रांतिकारियों ने इस पुल के बनने में बाधा दी, और न लखनऊ के क्रांतिकारियों ने इसके बनने में रुकावट डाली । क्या लखनऊ के क्रांतिकारी यह नहीं समझते थे कि पुल के बनने से अंग्रेजों को अनवरत सहायता मिल सकेगी, और अवध में दुर्घटना होने पर वे इस पुल के द्वारा जान बचा कर भाग सकते थे ? स्पष्ट है कि लखनऊ और कानपुर के क्रांतिकारियों में किसी भी प्रकार की पारस्परिक सुनियोजित योजना नहीं थी ।

क्रांतिकारियों को हर दशा में इस पुल को बनने नहीं देना चाहिए था । वास्तव में गंगा के पुल का युद्ध अवध के युद्ध का प्रथम मोर्चा हो सकता था ।

२५ जुलाई को हेवलाक ने पंद्रह सौ सैनिकों के साथ गंगा को पार किया । कानपुर से पाँच मील की दूरी पर मगरवारा में उसने एक अग्रिम चौकी स्थापित की । मगरवारा एक ऊँचे स्थान पर बसा था । इस चौकी से गंगा में आने-जाने वाली नावों पर नियंत्रण रखा जा सकता था, और पुल से आने-जाने वाली फौजों को भी संरक्षण दिया जा सकता था । शत्रु की सेना को पुल पार करने से भी रोका जा सकता था । मगरवारा में हेवलाक स्थिति के विगड़ने पर आश्रय लेने के लिए आ सकता था, और अपने घायल

एव बीमार सिपाहियों को भी इलाज के लिए भेज सकता था ।

मगरबारा में वह तीन दिन रसद और यातायात के साधनों के लिए रुका । २८ जुलाई को उसने प्रधान सेनापति को एक पत्र लिखा, जिसमें उसने अपनी कठिनाइयों का वर्णन किया, और अपनी सीमित शक्ति के कारण कुछ कर सकने में अपनी असमर्थता ही दिखलाई । उसके पत्र का आशय इस प्रकार था—

“यदि यह मान भी लिया जाए कि लखनऊ रेजीडेन्सी के सैनिक घेरा काटकर मुझसे आ मिलते हैं, तब भी मेरे गंगा पार कर कानपुर वापस लौटने के प्रयास में भारी क्षति की संभावना है । मेरी लौटती हुई सेना पर क्रांतिकारी पीछे से वार करेंगे । उसी प्रकार मेरा रेजीडेन्सी के घिराव में आए हुए व्यक्तियों को मुक्ति देना भी कठिन है । क्रांतिकारी रेजीडेन्सी के घेरे को क्रमशः दृढ़ करते जा रहे हैं । ज्यों-ज्यों समय बीतता जा रहा है, क्रांतिकारियों की संख्या भी क्रमशः बढ़ती जा रही है ।

“लखनऊ की ओर बढ़ने में कठिनाइयाँ अधिक हैं । मार्ग में सई नदी के ऊपर ‘वनी’ नामक स्थान में पुल है । नदी की प्राकृतिक रुकावट का लाभ उठाकर क्रांतिकारियों ने यहाँ प्रबल मोर्चा बना रखा है । उन्होंने पुल को बारूद से

छापन

उड़ाने का प्रबन्ध भी कर रखा है। यह भी संभव है कि 'वनी' पर सीधा आक्रमण करने में मुझे एक-तिहाई सेना से हाथ धोना पड़े।

“आज सुबह मुझे रेजीडेन्सी के इंजीनियर से लखनऊ क्षेत्र का मानचित्र मिला। उसमें उन्होंने मुझे रेजीडेन्सी तक पहुँचने का मार्ग दर्शाया है, और अन्य लाभदायक सूचना भी दी है। जासूसों के द्वारा लाई गई सूचना के आधार पर मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि रेजीडेन्सी के घेराव में आए हुए व्यक्तियों को किसी प्रकार की सहायता पहुँचा सकना अति कठिन है। इस प्रयास में हमें हानि भी अधिक उठानी पड़ेगी। लेकिन मैं हर प्रकार का खतरा उठा कर भी लखनऊ पहुँचने का प्रयास करूँगा। हैजा के कारण हमारी सेना की संख्या दिन प्रति दिन कम होती जा रही है। मेरी सेना में पंद्रह सौ सैनिक हैं, जिनमें बारह सौ अंग्रेज हैं, और दस तोपे हैं।”

प्रधान सेनापति को लिखे हुए इस पत्र के अनुसार हेवलाक की स्थिति निराशाजनक प्रतीत होती है। लेकिन वह निष्क्रिय भी नहीं रह सकता था। अतः २९ जुलाई को उसने उन्नाव की ओर प्रस्थान किया। उन्नाव में उसका मार्ग क्रांतिकारियों ने रोक रखा था। क्रांतिकारियों की सेना का अगला भाग वगीचे की एक चहार दिवारी के पीछे सुरक्षित था। उसका दायीं भाग दलदल के पीछे फैला

हुआ था, जिस पर सीधा आक्रमण नहीं किया जा सकता था। क्रांतिकारियों की बाकी सेना मकानों के पीछे और मकानों के अंदर इकट्ठी थी, जिनकी दीवारों पर गोली चलाने के लिए छेद कर दिए गए थे। युद्ध के फलस्वरूप हेवलाक ने क्रांतिकारियों की तोपों पर कब्जा कर लिया।

इस समय उसे समाचार मिला कि लखनऊ से क्रांतिकारियों की सहायता के लिए तोपखाने के साथ एक सेना आ रही है और वह उन्नाव पहुँचने ही वाली है। यह महत्वपूर्ण था कि नवागतुक सेना का नगर में घुसने के पूर्व ही सामना कर लिया जाता। अतः हेवलाक तेजी से आगे बढ़ा और नगर को पार कर उसने अपना मोर्चा ऐसे स्थान पर लगाया जो चारों ओर दलदल से घिरा था। इस स्थान से, लखनऊ से आने वाली सड़क पर गोलावारी की जा सकती थी। क्रांतिकारी जाल में फँस गए। अकस्मात् अंग्रेजों की तोप और गोलियों की मार उन पर पड़ी। मार से बचने के लिए क्रांतिकारी सेना दाएँ और बाएँ फैली, किंतु उनकी तोपें दलदल में फँस गईं। तीन सौ क्रांतिकारी मारे गए और पंद्रह तोपें अंग्रेजों के हाथ लगीं। हेवलाक ने उनका पीछा कुछ दूरी तक किया, ओर तीन घंटे विश्राम करने के बाद, वह ६ मील आगे बशीरतगज पहुँचा।

बशीरतगज छोटा कस्बा था। उसके चारों ओर चहार दिवारी थी। क्रांतिकारी मकान और चहार दिवारी की

आड में मोर्चों पर डटे थे। पीछे की तरफ से उन्हें पानी के एक लगभग सात फुट गहरे तालाब से सरक्षण मिलता था, जिसके ऊपर एक पुलिया से सड़क जाती थी। हेवलाक ने सामने से आक्रमण नहीं किया, जैसा कि क्रांतिकारी सोचते होंगे। उसने नगर के दाएँ बाएँ ओर से आक्रमण किया। क्रांतिकारी विस्मित रह गए। कुछ देर सामना करने के बाद वे रणक्षेत्र से भाग गए।

इन दो युद्धों के फलस्वरूप जिनमें हेवलाक को सफलता मिली थी, उसके अट्ठासी सैनिक मर चुके थे। अब उसकी सेना में केवल आठ सौ पचास सैनिक बचे थे। जितनी भी गाड़ियाँ उपलब्ध थी, वे सब घायलों से भरी थी। वह केवल लखनऊ की एक-तिहाई दूरी को पार कर सका था। गुप्तचरों द्वारा सूचना मिली थी कि लखनऊ से आगे मार्ग में क्रांतिकारी कई स्थानों पर उसका सामना करने के लिए इकट्ठे हैं। हेवलाक ने निश्चय किया कि उसे मगरवारा लौट जाना चाहिए। वहाँ घायलों की सुचारु रूप से चिकित्सा हो सकेगी, और उसके सैनिक आराम कर सकेंगे। पुनः अधिक सैनिक प्राप्त होने पर ही उसे लखनऊ की ओर बढ़ना चाहिए, इस निर्णय से कई सैनिकों को निराशा हुई। वे सोचते थे कि सीमित साधनों के होते हुए भी, उनका लखनऊ पहुँचना संभव था।

मगरवारा पहुँचने पर हेवलाक ने ३१ अक्टूबर को कानपुर के

कमांडर नील को एक पत्र लिखा । (नील आगे चलकर 'कानपुर का कमांड' के नाम से प्रसिद्ध हुआ । उसने क्रांतिकारियों एवं जनसाधारण पर अकथनीय अत्याचार किए) । पत्र में लिखा था कि मैं लखनऊ की ओर बढ़ सकता हूँ, यदि मुझे कुछ तोपें और एक हजार सैनिक मिलें ।

नील ने हेवलाक के वापस लौटने को अच्छा नहीं समझा । उसका विचार था कि इससे ब्रिटिश प्रतिष्ठा को धक्का लगा दे । अब तक भारतीय ब्रिटिश सैन्य शक्ति से प्रभावित थे । हेवलाक के लौटने से वे यही समझेंगे कि अब अंग्रेजों की शक्ति क्षीण हो गई है । नील ने हेवलाक को एक अभद्र पत्र भेजा—

“मुझे दुःख है कि आप पीछे हटते हैं, इससे हमारी प्रतिष्ठा पर बुरा प्रभाव पड़ा है । कानपुर में अनेक खबरे फैली हुई हैं, जिनमें एक यह है कि आप जितनी तोपें ले गए थे, उनको खो चुके हैं । आप अधिक तोपों को लेने के लिए पीछे हटते हैं । सबका यह विश्वास है कि आप पराजित हुए हैं । यह एक दुर्भाग्यपूर्ण बात है कि शत्रुओं से छीनी हुई तोपें आप अपने साथ नहीं लाए । आपके पीछे हटने का निश्चय हमारे उद्देश्य के लिए बहुत हानिकर हुआ है । आपको फिर आगे बढ़ना चाहिए, और तब तक नहीं रुकना चाहिए, जब तक कि आप रेजीडेन्सी के घेरे में आए हुए व्यक्तियों को बचा न लें ।”

50225—

अपने अधीनस्थ अधिकारी की कटु आलोचना से हेवलाक तिलमिला उठा। उसने नील को मुहत्तोड़ जवाब दिया कि, 'तुम्हे यह भली भाँति समझ लेना चाहिए कि यदि यह राजकाज मे बाधक नहीं होता तो मैं तुम्हे गिरफ्तार करवा देता। तुम्हारा इस प्रकार का पब-व्यवहार अशोभनीय है।'

हेवलाक को केवल २५७ सैनिकों की और सहायता मिल सकी थी। उन्होंने केवल मरे हुए सैनिकों के ग्विन स्थानों की पूर्ति की। उससे सैनिक सख्या में कोई वृद्धि न हो सकी, और न स्थिति में ही कोई सुधार हुआ। फिर भी उसने दूसरी बार लखनऊ की ओर प्रस्थान करने का निश्चय किया। वजीरत-गज में क्रांतिकारी फिर आ गए थे, और उन्होंने हेवलाक से युद्ध करने की सब तैयारियाँ कर रखी थी। हेवलाक ने क्रांतिकारियों को हराया, लेकिन वह उनका पीछा न कर पाया। उसके पास छुडमवार सेना बहुत कम थी। क्रांतिकारी अपनी तोपों को भी साथ ले जाने में सफल हुए। हेवलाक को स्पष्टतया आभास हुआ कि वह लखनऊ को सहायता पहुँचाने के लिए शक्तिशाली नहीं है।

इस समय उसे ग्वालियर पेना के विद्रोह का भी समाचार मिला, जिसके कारण कालपी और कानपुर में गंभीर स्थिति पैदा होने की संभावना बढ़ गई थी। उसके सम्मुख दो समस्याएँ थीं वह लखनऊ की ओर बढ़े, या गंगा पार कर कालपी तथा कानपुर क्षेत्र की बिगड़ती हुई स्थिति का सामना

करने के लिए तत्पर रहे। हेवलाक ने सोचा कि यदि वह लखनऊ की ओर बढ़ता है तो उसे एक-तिहाई सेना से हाथ धोना पड़ेगा। लखनऊ के युद्ध के लिए उसके पास केवल सात सौ व्यक्ति बचेगे। प्रतिदिन उसकी सेना में हैजा से मृत्यु हो रही थी। यह असंभव था कि सात सौ सैनिकों की सहायता से वह रेजीडेन्सी में घिरे हुए व्यक्तियों की किसी भी प्रकार की मदद कर पाता। यह भी संभव था कि इस प्रयास में उसकी पूरी सेना ही नष्ट हो जाती। उसने निश्चय किया कि वह मगरवारा लौट जाएगा।

उमें रेजीडेन्सी से 'जान बचाओ' संदेश मिल रहे थे। लेकिन वह कर ही क्या सकता था। अब तो वह इस स्थिति में भी न था कि उनको आशा का संदेश भी दे पाता। कटु वास्तविकता का विचार कर उसने इंगलिस को राय दी कि जो कुछ बन पड़े स्वयं ही करो। कहीं से भी किसी प्रकार की मदद की आशा छोड़ दो। यदि संभव हो तो घेरे को काटकर कानपुर चले आओ। यह एक ऐसी राय थी जिसका पालन करना इंगलिस के लिए असंभव था। लेकिन कानपुर में क्रांतिकारियों की बढ़ती हुई शक्ति के कारण हेवलाक को गंगा पार कर अवध को छोड़ना पड़ा।

हेवलाक अवध को छोड़ कर कानपुर नहीं जाना चाहता था। उसका विश्वास था कि इसका दुष्परिणाम होगा। सर्वसाधारण इसका यही अर्थ लगाएँगे कि अंग्रेज पीछे हट रहे हैं। क्रांतिकारियों के पक्ष की वृद्धि होगी।

बामठ

हेवलाक का अवध छोड़ना

कानपुर मे क्रांतिकारियों का नेता नाना साहव था। वह पदच्युत पेशवा का दत्तक पुत्र था। जब अंग्रेजो ने उसकी पेशन बद कर दी तो वह अंग्रेजो का शत्रु बन गया। सन '५७ की क्रांति मे वह बिठूर-कानपुर क्षेत्र मे सक्रिय रहा।

लखनऊ की अपेक्षा कानपुर मे क्रांतिकारियों को अधिक सफलता मिली। मगरवारा मे हेवलाक को समाचार मिला कि बिठूर मे क्रांतिकारी सक्रिय हो रहे है। यह अंग्रेजों के लिए नया खतरा पैदा हो गया था। यदि कानपुर क्षेत्र मे क्रांतिकारी और अधिक सशक्त बनने दिए जाते तो हेवलाक को पीछे की ओर से भी आक्रमण की आशका बनी रहती, अत उसने बिठूर की ओर प्रस्थान करने का निश्चय किया।

लखनऊ की स्थिति तो शोचनीय थी ही। इस प्रकार

तिरसठ

हेवलाक लखनऊ और कानपुर के क्रांतिकारियों के मध्य चक्की के दो पाटो के बीच आए हुए अनाज की तरह पिस सकता था, यदि दोनों नगरों के क्रांतिकारियों ने मिल कर उस पर दोनों तरफ से साथ-साथ हमला कर दिया होता ।

कानपुर का सामरिक दृष्टि से अपना महत्व था । यदि कानपुर क्रांतिकारियों के अधिकार में पूर्णतया आ जाता, तो इलाहाबाद से आने-जाने के साधनों पर रोक लग जाती । उत्तर भारत के अंग्रेजों को सहायता कलकत्ता से होते हुए गंगा के मार्ग से ही मिल सकती थी । अतः हेवलाक को

हाथी पर सवार नाना साहब



कानपुर में अंग्रेजी सत्ता को बनाए रखना आवश्यक प्रतीत हुआ ।

कानपुर का कमांडर नील अपनी बची-खुची सेना के साथ एक चौकी बना कर रक्षात्मक युद्ध लड़ रहा था । उसकी स्थिति स्वयं निर्बल थी । नील ने हेवलाक को लिखा कि, “विदूर, मैं एक हजार क्रांतिकारी पाँच तोपों के साथ आ डटे हूँ । यदि मुझे सहायता नहीं मिल पाती है तो मैं इस सिलसिले में कुछ नहीं कर सकता हूँ । मैं केवल अपनी और चौकी किले-बंदी की रक्षा कर सकता हूँ ।”

हेवलाक ने निश्चय किया कि सामरिक दृष्टि से उसका विदूर जाना उचित ही होगा । उसने अपना कुछ सामान गंगा पार भेज भी दिया था, जब उसे समाचार मिला कि वशीरतगज में चार हजार क्रांतिकारी फिर एकत्र हो गए हैं । नदी पार करते समय उसे डर बना रहता कि कहीं उस पर पीछे से आक्रमण न हो जाए । अतः उसने तय किया कि पहले वशीरतगज में एकत्र क्रांतिकारियों से निपटा जाए ।

भारी वर्षा हो रही थी । वह वशीरतगज की ओर बढ़ा । वशीरतगज में तीसरी बार उसने क्रांतिकारियों से युद्ध किया । वे पराजित हुए, और रणक्षेत्र छोड़ कर भाग गए ।

मगरवारा लौट कर हेवलाक ने गंगा नदी को पार किया ।

तत्पश्चात् पुल को तोड़ कर उसने बिठूर की ओर प्रस्थान किया । उसने पुल को तोड़ना आवश्यक समझा । पुल के बने रहने पर उसे अवध के क्रांतिकारियों से डर बना रहता । वे उस पर पीछे से आक्रमण भी कर सकते थे और कानपुर के क्रांतिकारियों की सहायता के लिए भी आ सकते थे ।

बिठूर में क्रांतिकारियों ने विस्तृत मैदान में जहाँ गन्ने की खेती हो रही थी, युद्ध के लिए व्यूह रचना की थी । उन्होंने अपनी सेना और तोपों को पौधों के पीछे छिपा रखा था । हेवलाक अपने सशक्त तोपखाने को लेकर युद्ध के लिए बढ़ा । दोनों तरफ से गोलावारी हुई । युद्ध के परिणामस्वरूप क्रांतिकारियों की पैदल सेना तो टिक न सकी, किंतु छिपी हुई तोपों से अग्रेजों पर भीषण अग्नि वर्षा हुई । हेवलाक ने स्वयं इस तथ्य को स्वीकार किया कि क्रांतिकारी उसके सशक्त तोपखाने के विरुद्ध वीरता से लड़े । विजय अग्रेजों की हुई । हेवलाक कानपुर लौट आया ।

लखनऊ की बिगड़ती हुई स्थिति के कारण उसे चिंता हो रही थी । उसका लखनऊ का मुक्तिदाता बनने का स्वप्न अपूर्ण ही रह गया था । अब तक वह क्रांतिकारियों पर छुट-पुट विजय ही प्राप्त कर सका था, लेकिन क्रांतिकारियों का उत्साह किसी प्रकार कम नहीं हुआ था । वे पुनः युद्ध के लिए एकत्र हो जाते थे ।

छियासठ

छ सप्ताह पश्चात उसे कलकत्ता से सहायता मिली । कलकत्ता से उटरम इतनी सेना लेकर आया कि उनकी सम्मिलित सेना मिलकर लखनऊ के घेरे में आए हुए व्यक्तियों की सहायता के लिए बढ़ सकती थी । उधर अवध की क्रांति ने हेवलाक के अवध छोड़ने पर जन क्रांति का रूप ले लिया था । अवध के विभिन्न वर्ग के लोगो ने अंग्रेजो के विरुद्ध हथियार उठा लिए थे । लखनऊ रेजीडेन्सी के घेरे को सशक्त करने के लिए, अवध से विभिन्न भागो से सैनिक खिंचे आ रहे थे ।

मददगार स्वयं घेरे के अंदर

बिटूर की विजय के पश्चात जब हेवलाक १७ अगस्त को कानपुर पहुँचा तो उसे कलकत्ता गजट की एक प्रति मिली। उसे ज्ञात हुआ कि उसके पद को सर जेम्स उटरम को दे दिया गया है। उसे अब उटरम के अधीन रहकर कार्य करना होगा, इस समाचार से उसे निराशा हुई। उसने सीमित साधनों के होते हुए भी रेजीडेन्सी के घेरे में आए हुए व्यक्तियों को वचाने का गुस्तर भार उठाने का भरसक प्रयत्न किया था। वह असंभव को तो संभव नहीं कर सकता था। और उसे यह पुरस्कार मिला कि वह पदच्युत कर दिया गया। अब नेता न रहकर वह अधीनस्थ हो कर कार्य करेगा। कोई अन्य सैनिक होता तो इस स्थिति में उसकी आत्मा विद्रोह करती, किंतु हेवलाक एक अनुभवी और सुलझा व्यक्ति था। अनुशासन का पालन करना सैनिक के लिए सर्वोपरि था।

वह लखनऊ लेने के लिए तैयारी करता रहा। हैजा के कारण उसके सैनिक मरते जा रहे थे। उसकी सेना में केवल सात सौ सैनिक रह गए थे। हेवलाक उत्कठापूर्वक उस दिन की प्रतीक्षा कर रहा था, जब सर जेम्स उटरम अपने सैन्य दल के साथ आएगा, और उनकी सम्मिलित सेना लखनऊ की ओर कूच करेगी।

उटरम के आने पर सम्मिलित सेना में ३,१७० सैनिक हो गए थे, जिनमें २,३८८ अंग्रेज सैनिक थे। घुड़सवारों की संख्या केवल १६८ थी।

उटरम रेजीडेन्सी लेने वाली सेना का अधिनायक बना कर भेजा गया था। उसने निश्चय किया कि हेवलाक ही इस सेना का संचालन करेगा। वह एक असैनिक स्वयंसेवक की भाँति उसके साथ रहेगा। उसका विचार था कि रेजीडेन्सी को लेने का श्रेय हेवलाक को ही मिलना चाहिए, जो सीमित साधनों के होते हुए भी रेजीडेन्सी तक पहुँचने का सतत प्रयत्न करता रहा।

कानपुर से हेवलाक और उटरम की सम्मिलित सेना ने लखनऊ की ओर प्रस्थान किया। पहले कहा जा चुका है कि विठ्ठर जाते समय हेवलाक ने गंगा के पुल को तोड़ दिया था। यह निश्चय किया गया कि पुराने पुल के स्थान पर फिर नावो का पुल बनाया जाए।

उनहत्तर

हेवलाक के हटने पर क्रांतिकारियों ने मगरवारा पर अधिकार कर लिया था। वहाँ आठ तोपों के साथ आठ हजार क्रांतिकारी जमे हुए थे। पुल बनने लगा, और बनता गया, लेकिन क्रांतिकारियों ने उसके बनने में किसी प्रकार की बाधा नहीं दी। सामरिक दृष्टि से क्रांतिकारियों के लिए यह अति महत्वपूर्ण था कि गंगा में पुल न बनने पाता। पुल बनने से हेवलाक और उटरम को निरंतर सहायता मिल सकती थी। मगरवारा में क्रांतिकारियों की संख्या इतनी काफी थी कि वे पुल के बनने में रुकावट डाल सकते थे। उन्हें रुकावट डालनी चाहिए थी, किंतु वे केवल दर्शक मात्र ही रहे। अंग्रेजी सेना के पुल पार करते समय भी उन्होंने किसी प्रकार की बाधा नहीं डाली। क्रांतिकारियों ने एक अच्छे अवसर को हाथ से निकाल दिया। वास्तव में रेजीडेन्सी की लड़ाई का यह पहला मोर्चा था।

१६ सितंबर को हेवलाक ने गंगा को पार किया। उसी दिन उसे रेजीडेन्सी से इंगलिस का सदेश मिला। अगद समाचार लाया था कि रेजीडेन्सी में क्रांतिकारी लगातार आक्रमण कर रहे थे, और खाद्य पदार्थ की कमी से चिंता-जनक स्थिति उत्पन्न हो गई थी।

मगरवारा में युद्ध हुआ। क्रांतिकारी टिक न सके, और वे बशीरतगज की ओर भाग निकले। उनके १२० सैनिक मरे और दो तोपें अंग्रेजों के अधिकार में आईं। उस रात्रि को

सत्तर

हेवलाक की सेना ने वशीरतगज में विश्राम किया। क्रातिकारी वशीरतगज के मोर्चे को छोड़कर पहले ही चल दिए थे। अगले दिन २२ सितंबर को मुसलाधार वर्षा में हेवलाक की सेना सई नदी के किनारे आ पहुँची। क्रातिकारियों ने इस मोर्चे को छोड़ते समय पुल को न तोड़ कर विश्राम किया। अब वे लखनऊ से लगभग सोलह मील की दूरी पर थे। यहाँ उन्होंने तोपों के गोले इस आशय से छोड़े कि तोपों की आवाज रेजीडेन्सी के घेरे में आए हुए व्यक्ति सुन ले, और उनमें नई आशा का संचार हो जाए। किंतु तोपों की आवाज घेरे में आए हुए व्यक्ति सुन न पाए।

अगले दिन वर्षा रुक गई, किंतु घुटन और उमस थी। हवा भी रुकी हुई थी। क्रातिकारियों की तोपें जो रेजीडेन्सी पर लगातार गोलावारी कर रही थी, प्रातः काल से ही शांत थी। ऐसा प्रतीत होता था कि आगामी युद्ध की सभावना का विचार कर तोपें नगर की रक्षा के लिए नए स्थानों को ले जाई जा रही थी। लखनऊ के क्रातिकारी हेवलाक और उदरम की सम्मिलित सेना का सामना करने के लिए अपनी शक्ति सँजो रहे थे।

क्रातिकारी आलमवाग में मोर्चा बनाए डटे थे। आलमवाग लखनऊ कानपुर मार्ग पर लखनऊ से पाँच मील की दूरी पर स्थित है। इसे अवध के अंतिम नवाब वाजिद अली शाह ने अपनी बेगमों के रहने के लिए बनवाया था

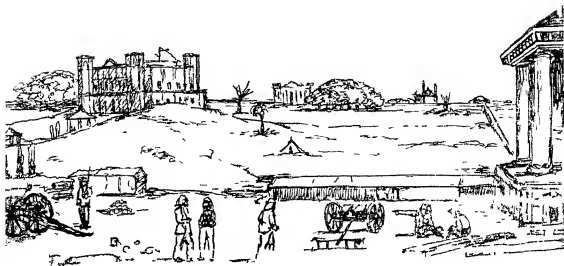
इकहत्तर

वर्षा के कारण सर्वत्र जल ही जल दीखता था। क्रांतिकारियों ने अपनी व्यूह-रचना में बारह सौ सैनिकों को सड़क के आर-पार फैलाया था। वहाँ पक्ष को आलमबाग और दाएँ पक्ष को दलदल के पीछे सुरक्षित रखा था। क्रांतिकारियों ने अंग्रेजों के पहुँचते ही तोपों से गोले बरसाने शुरू किए।

प्रत्युत्तर में हेवलाक ने भी अपने तोपखाने को सामने किया और क्रांतिकारियों पर गोलावारी प्रारंभ की। अंग्रेजों का तोपखाना भारतीय तोपखाने की अपेक्षा अधिक सशक्त था, और अंग्रेजों के पास तोपें भी संख्या में अधिक थीं।

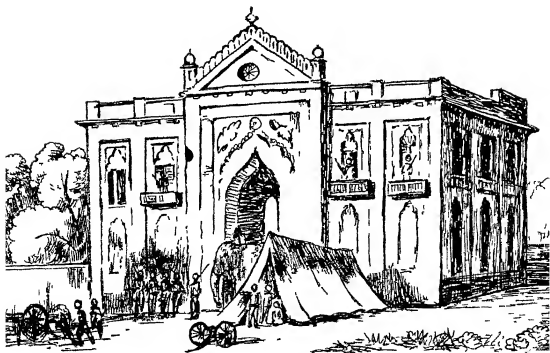
तोप के गोलों और बंदूक की गोलियों की बौछार से कुछ हद तक सुरक्षा पाकर अंग्रेज पैदल सेना आक्रमण के लिए आगे बढ़ी।

आलमबाग



क्रांतिकारी यह आशा नहीं करते थे कि अंग्रेज दलदल को पार कर उन पर आक्रमण करेंगे। किंतु हेवलाक ने क्रांतिकारियों को आश्चर्य में डाल दिया। उसके सैनिक दलदल को पार कर आक्रमण कर बैठे। जिस दलदल को वे दुर्भेद्य समझे बैठे थे, वह आसानी में पार कर लिया गया। अंग्रेज सिपाही सीने तक गहरे पानी को पार कर आक्रमण कर बैठे। क्रांतिकारियों के मध्य भाग में भी उसी समय साथ-साथ आक्रमण किया गया। अंग्रेजों के सशक्त तोपखाने

आलमबाग का मुख्य द्वार



ने क्रांतिकारियों की तोपो की मार को शात कर दिया। क्रांतिकारियों की पैदल सेना ने आगे बढ़कर अंग्रेजों का सामना करने का प्रयास किया, किंतु तोपो की मार से बचने के लिए उन्हें भी लौटना पड़ा। आलमवाग की दीवालों का सहारा लेकर उन्होंने युद्ध किया, किंतु अंत में क्रांतिकारियों को आलमवाग छोड़ना पड़ा।

अंग्रेजों की घुड़सवार सेना ने क्रांतिकारियों का पीछा नहर के ऊपर चारवाग के पुल तक किया। इस नहर को नवाब गाजीउद्दीन हैदर ने बनवाया था। उसकी योजना यह थी कि गंगा के अतिरिक्त जल को गोमती नदी में इस नहर के द्वारा पहुँचाया जाए। तराई के एक तालाब से निकलने वाली गोमती नदी में बहुत कम जल रहता है। वह उसके जल की वृद्धि करना चाहता था किंतु नहर कुछ ही मील बन पाई। नगर के लिए कुछ सीमा तक वह सुरक्षा का साधन अवश्य बन गई। पुल पर क्रांतिकारियों ने डट कर सामना किया। हेवलाक वापस लौट आया, और उस रात्रि को अंग्रेजों ने आलमवाग में विश्राम किया।

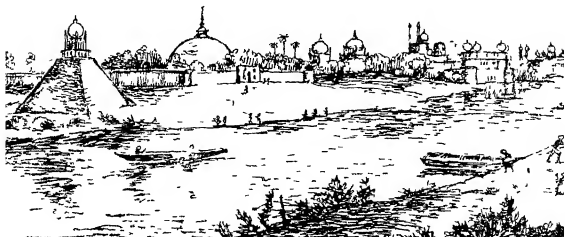
अब अंग्रेजी सेना लखनऊ के सम्मुख थी। इसी समय समाचार मिला कि अंग्रेजों ने दिल्ली ले ली है। इस समाचार से अंग्रेजी सेना का मनोबल बढ़ा और उन्होंने दृढ़ संकल्प किया कि लखनऊ को ले लेना चाहिए। बाद में पता चला कि इस समाचार का कोई आधार नहीं था।

चौहत्तर

हेवलाक के सामने यह समस्या थी कि वह किस मार्ग का चयन करे कि कम-से-कम समय में रेजीडेन्सी पहुँच जाए, और उसकी सेना को न्यूनतम क्षति पहुँचे। जासूसों से उसे समाचार मिला कि सिकंदरबाग, शाहनजफ और मोती-महल खाली हैं। ये तीनों स्थान चहार दीवारी से घिरे थे और किले की भाँति सुरक्षित थे। क्रांतिकारियों ने नगर के बचाव के लिए यहाँ मोर्चे नहीं बनाए थे। केवल कैसरबाग में उन्होंने तैयारी कर रखी थी।

उठरम जो मन सत्तावन की क्रांति के पूर्व अवध का रेजीडेंट एव चीफ कमिशनर रह चुका था, लखनऊ और

गोमती नदी के दक्षिण ओर स्थित महत्वपूर्ण भवनों का एक विहंगम दृश्य—शाहनजफ, मोतीमहल और छतरमजिल आदि।



उसके निकटस्थ क्षेत्र से भली भाँति परिचित था। उसने राय दी कि सबसे उचित मार्ग यह होगा कि चारवाग के पुल को पार कर, नहर के बाएँ किनारे बढ़ते हुए रेजीडेन्सी के पूर्व में स्थित महलो तक पहुँचा जाए।

२५ सितंबर को प्रातः काल अंग्रेजी सेना आलमवाग से आगे बढ़ी। सेना के अग्रिम दल का नेतृत्व उटरम तोपखाने के साथ कर रहा था। हेवलाक सेना के पिछले भाग के साथ था। वर्षा ऋतु के कारण मार्ग के दोनों तरफ लची घास उग आई थी। क्रांतिकारियों ने अपनी तोपें घास के अंदर छिपा रखी थी। ज्यों ही अंग्रेजी सेना आगे बढ़ी उस पर तोप के गोलों की मार पड़ी। दीवालों से घिरे बगीचों एवं मकानों से गोलावारी जारी रही, लेकिन अंग्रेजी सेना आगे बढ़ती रही और पुल तक पहुँच गई।

क्रांतिकारियों ने निश्चय किया कि पुल पर अंग्रेजों का जम कर सामना किया जाए। वहाँ उन्होंने ६ तोपें लगा रखी थी, और निकटस्थ मकानों से भी गोलावारी करने का प्रबंध कर रखा था। उन्होंने चारवाग की चहार दीवारी के पीछे भी कई तोपें लगा रखी थी। इस सम्मिलित मार से अंग्रेजी फौज आगे न बढ़ सकी। वह रुक गई। उटरम ने एक टोली को लेकर चारवाग के अहाते से आक्रमण-कारियों को हटा दिया। इसी समय नील ने पुल पर स्थित क्रांतिकारियों की छ तोपों पर कब्जा कर लिया। अब

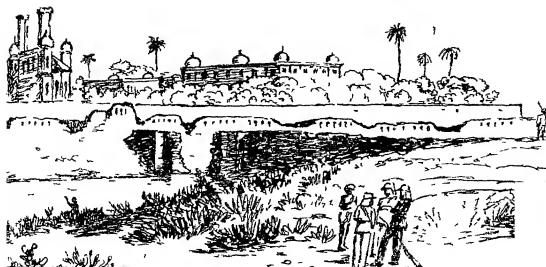
छिहत्तर

अंग्रेजों को तोप के गोलों की मार से छुटकारा मिल गया,
और उन्होंने पुल को पार किया।

नहर के किनारे-किनारे बाईं ओर बिना किसी विशेष रुका-
वट के बढ़ती हुई अंग्रेज सेना मोतीमहल पहुँची। मोती-
महल और रेजीडेन्सी की छ फर्लांग की दूरी में कई महल
एवं भवन थे। बेगम कोठी और अस्तबल पर अंग्रेजों को
रोकने का प्रयास किया गया, किंतु अंग्रेजों के तोपखाने की
मार के सामने वे टिक न पाए।

अब अंग्रेजों की सेना रेजीडेन्सी से केवल पाँच सौ गज की
दूरी पर थी, और फरहतवखश महल पर आ पहुँची थी।
अँधेरा होने लगा था। रेजीडेन्सी की ऊँचाई से घेरे में आए
हुए व्यक्ति आगे बढ़ती हुई सेना को देख रहे थे। वे अति

मोतीमहल



प्रसन्न थे कि घेरे के जीवन के अभावो से उनको छुटकारा मिल जाएगा । कुछ ईश्वर को धन्यवाद देने के लिए प्रार्थना करने लगे थे । मुक्तिदायिनी सेना के स्वागत के लिए सब उत्कण्ठित थे ।

उटरम इस पक्ष मे नही था कि रात्रि को ही रेजीडेन्सी पहुँचा जाए । वह चाहता था कि रात्रि को सैनिक छतर-मजिल में विश्राम करे । किंतु हेवलाक ने निश्चय किया कि विश्राम करना उचित न होगा । तुरत रेजीडेन्सी पहुँचना चाहिए । उसने उस मार्ग का चयन किया, जिसके दोनो तरफ मकान थे । मकान की दीवालो मे बने छेदो से उन पर लगातार गोलावारी हुई । कदम-कदम पर सैनिक गिरने लगे । बचाव का कोई साधन न था । सडको मे क्रांतिकारियों ने गहरी खाइयाँ खोद रखी थी । इसी समय कानपुर के हत्यारे नील के एक गोली लगी और वह मर गया ।

अँधेरे मे हेवलाक, उटरम और उसकी सेना रेजीडेन्सी पहुँची । ८८ दिन के पश्चात रेजीडेन्सी मे घिरे हुए व्यक्तियो को सहायता मिली, लेकिन आक्रमणकारियों की एक-चौथाई सेना मारी गई या घायल हुई । घनी आवादी से आक्रमण करना विवेकपूर्ण कार्य नही था । प्रत्येक घर से उन पर लगातार गोलियो की वौछार होती रही ।

रेजीडेन्सी मे खुशियाँ मनाई गई और ईश्वर को धन्यवाद

अठहत्तर

दिया गया कि आखिर सहायता आ ही गई, लेकिन यह सहायता भी कैसी सहायता थी। घेरे में आए हुए व्यक्ति पूर्वत घेरे में ही रहे। उद्धारक स्वयं घेरे में आ गए थे।

अब रेजीडेन्सी में उतरम और हेवलाक की सम्मिलित सेना के आने के कारण सैनिकों की संख्या बढ़ गई थी। अतः रेजीडेन्सी के वचाव की पुनर्व्यवस्था की गई। रेजीडेन्सी का पुराना क्षेत्र ब्रिगेडियर इंगलिस के अधिकार में बना रहा।

हेवलाक उस विस्तृत क्षेत्र का संचालक बना जिसके अंदर कई महल आते थे, और जिन्हें क्रमशः क्रांतिकारियों से रेजीडेन्सी की सुरक्षा के हेतु सामरिक दृष्टि से छीन लिया गया था। नए सैनिक फरहतबख्श महल और छतर मजिल में रहने लगे थे। (छतर मजिल में आजकल ड्रग रिसर्च इंस्टीट्यूट है।) ये दोनों महल रेजीडेन्सी से करीब-करीब मिले थे, और इनके चारों तरफ मजबूत चहार दीवारी बनी थी। नवाबों ने अपनी बेगमों के रहने के लिए छतर मजिल बनाई थी। फरहतबख्श महल क्लौड मार्टिन का महल था। उसने उसे नवाब सआदत अली खान को पचास हजार रुपए में बेच दिया था।

रेजीडेन्सी की सेना और आलमवाग की सेना का एक-दूसरे से किसी प्रकार का संबंध नहीं रह गया था। २ अक्तूबर को उतरम ने लिखा कि मैं नगर के एक भी व्यक्ति से किसी प्रकार का पत्राचार नहीं कर पाया हूँ। उतरम अवध राज्य

उनासी

मे रेजीडेण्ट रह चुका था और तत्पश्चात् अवध का चीफ कमिश्नर भी रहा था। अतः उसके लखनऊ एवं अवध के गण्यमान्य व्यक्तियों से व्यक्तिगत सबध थे। उसे आशा थी कि वह उन्हें प्रभावित कर पाएगा लेकिन क्रांतिकारियों ने नगर निवासियों को इतना आतंकित कर रखा था कि 'किसी की हिम्मत मुझ से पल्ल-व्यवहार करने की नहीं हुई।' उसकी यह आशा कि उसके लखनऊ पहुँचने पर अवध की जनता में किसी प्रकार की प्रतिक्रिया होगी केवल निराशा मात्र ही रही।

रेजीडेण्टसी से घुडसवार सेना ने प्रयास किया कि घेरे को काटकर कानपुर निकल जाएँ, किंतु यह संभव नहीं हो पाया। भविष्य में घेरे को काटकर बाहर निकलने के प्रयास त्याग दिए गए। हेवलाक और उटरम जो रेजीडेण्टसी के मुक्तिदाता होकर आए थे, स्वयं घेरे में फँस गए। उन्होंने अपनी शक्ति को इस योग्य नहीं समझा कि वे घेरे को तोड़ कर बाहर निकल सकते।

रेजीडेन्सी का सफल मुक्ति प्रयास

हेवलाक और उटरम की सम्मिलित सेना के रेजीडेन्सी के घेरे में आने पर स्थित पहले जैसी ही रही। अंतर इतना ही था कि घेरे में आए हुए व्यक्तियों की संख्या बढ़ कर तिगुनी हो गई थी। सम्मिलित सेना घेरे से बाहर आ पाने में अपने को असमर्थ पा रही थी। वह स्वयं सकट में फँस गई थी।

भारत में अंग्रेजों का नया सेनापति कोलिन कपवेल आ गया था। वह एक योग्य सैनिक था, और क्रीमिया के युद्ध में प्रसिद्धि पा चुका था। उसने निश्चय किया कि वह स्वयं रेजीडेन्सी के घेरे में आई हुई सेना को मुक्ति प्रदान करेगा और अवध क्षेत्र को क्रांतिकारियों से विमुक्त करेगा। वह स्कॉटलैंड का रहने वाला था और उसके साथ कई स्कॉटलैंड के हाइलेडर्स (पहाड़ियों) की सेनाएँ थी, जो

इक्क्यासी

अपनी वीरता के लिए आज भी प्रसिद्ध है। नेपाल के राणा जग बहादुर त्रिपाठी के कुछ वर्ष पूर्व विलायत गए थे। उन्हें हाइलैंडर्स की एक सेना ने, जो अब लखनऊ में थी, सलामी दी थी। वे इन छ फुट लंबे जवानों की सेना से इतने प्रभावित हुए थे कि उन्हें खरीदने की इच्छा प्रकट की थी। उन्हें बताया गया था कि यह सेना स्वयंसेवकों की है, और उसे बेचा नहीं जा सकता। इनकी वर्दी में स्कर्ट होती है, जिसके कारण इन्हें भारतवासी घघरिया पल्टन भी कहते थे। एक तत्कालीन अवधवासी ने एक हाइलैंडर्स से प्रश्न किया था कि क्या वे विलायत की रानी की हिजड़ा पल्टन के सैनिक हैं। मुस्लिम युग में हिजड़े सैनिक विशेष रूप से हरमों की सुरक्षा के लिए रखे जाते थे। अचूक निशाने वाला बौव, जिसने रेजीडेन्सी के युद्ध में प्रसिद्धि पाई थी, स्वयं एक अफ्रीकी हिजड़ा था।

सर कोलिन केपवेल भी कानपुर से होता हुआ लखनऊ की ओर बढ़ा। उसकी सेना में एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं था जो कि लखनऊ एवं उसके निकटस्थ क्षेत्र से परिचित हो। अवध को अंग्रेजी राज्य में मिले केवल एक वर्ष हुआ था। अवध क्षेत्र के नक्शे न बन पाए थे। पथ-प्रदर्शकों के अभाव में आक्रमणकारी सेना का आगे बढ़ना खतरनाक हो सकता था। भाग्यवश अंग्रेजों को ऐसा व्यक्ति मिल गया। केबेने रेजीडेन्सी में लिपिक का कार्य करता था। वह लखनऊ एवं

बयासी

उसके निकटस्थ क्षेत्र से भली भाँति परिचित था। उसने अपनी सेवा को पथ-प्रदर्शक के रूप में अर्पित किया। एक रात्रि को वह भारतीय भेष में रेजीडेन्सी से निकला, और कोलिन केपवेल के पडाव में जा पहुँचा। इस अभियान में केबेने सदैव सेनापति के साथ रहा और निरंतर पथ-प्रदर्शन करता रहा।

दस नवंबर १८५७ को केबेने सेनापति से मिला। सेनापति ने उसे अपनी आक्रमण योजना बताई। एक बात उसने निश्चयपूर्वक कही कि हेवलाक के मार्ग चयन की गलती फिर दुहराई नहीं जानी चाहिए। उन्हें ऐसा मार्ग चुनना चाहिए जहाँ आवादी न हो। लखनऊ का प्रत्येक मकान क्रांतिकारियों से भरा था। केपवेल ने अपने अभियान को तीन भागों में विभाजित किया।

सर्वप्रथम उन्हें आलमबाग पहुँचना था, जहाँ कि अग्रेजी सेना की चौकी थी, और रेजीडेन्सी से वे सकेतो द्वारा वातचीत कर सकते थे। सेनापति का विचार था कि आलमबाग में तबू तथा भारी सामान छोड़ दिया जाए, ताकि सेना तेजी से आगे बढ़ सके।

इसके पश्चात् वह आलमबाग से नगर के बाहर एक लंबा चक्कर लगाकर दिलकुशा पहुँचेगा। दिलकुशा में वह अपनी गाड़ियाँ और सामान ले जाने वाले पशुओं को छोड़

तिरासी

देगा । अब वह लखनऊ नगर की सीमा पर होगा । रेजीडेन्सी यहाँ से लगभग तीन मील की दूरी पर है । दिलकुशा से ला मार्टिनियर कालेज, सिकंदरबाग और शाहनजफ होता हुआ वह रेजीडेन्सी पहुँचेगा ।

अभियान का तीसरा और अंतिम भाग रेजीडेन्सी के घेरे में आए हुए व्यक्तियों को सही सलामत दिलकुशा पहुँचा देना था ।

सर कोलिन क्लेवेल का पहला पड़ाव ऊँची दीवार से घिरे

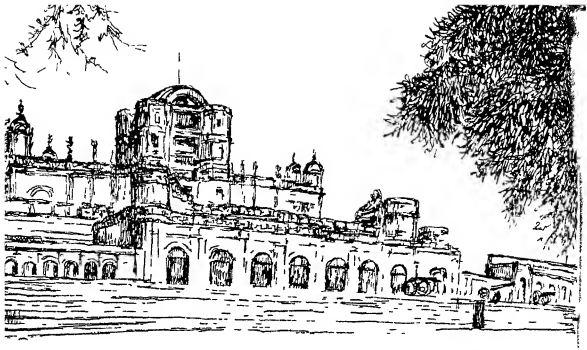
दिलकुशा महल



आलमबाग में था, जहाँ अंग्रेजी सेना के ग्यारह सौ व्यक्ति उत्सुकता से उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। १३ नवंबर की रात्रि को रेजीडेन्सी की छत पर कोलतार के एक पीपे में आग लगाई गई। उसकी ऊँची उठती हुई लपटों के माध्यम से आलमबाग में एकत्र सेना को सूचना दी गई थी कि रेजीडेन्सी के सैनिक आने वाली लड़ाई के लिए तैयार हैं, और अपना कर्तव्य निवाहेंगे। उसके उत्तर में आलमबाग से भी नीली रोशनी दिखाई गई। इसने रेजीडेन्सी के घेरे में आए हुए व्यक्तियों में नई आशा का संचार किया था।

आलमबाग से केपवेल की सेना नगर के बाहर लंबा चक्कर लगाकर दिलकुशा पहुँची। दिलकुशा शब्द के अर्थ हैं 'चित्त को प्रसन्न करने वाला'। दिलकुशा का निर्माण तीन वर्ग मील विस्तृत जंगल के मध्य किया गया था। यहाँ नवाब शिकार खेलने के लिए आते थे। मार्ग में उन्हें किसी प्रकार की रुकावट नहीं मिली। दिलकुशा पर क्रांतिकारियों का अधिकार था, लेकिन वे सीमित संख्या में ही वहाँ थे।

जब अंग्रेजों की सेना दिलकुशा के समीप पहुँची, तो क्रांतिकारियों ने अपनी छ छिपी हुई तोपों से उन पर गोलावारी की। अंग्रेजों ने भी गोलावारी की, और एक घंटे के अंदर दिलकुशा ले लिया। क्रांतिकारियों ने ढालू भूमि को पार कर ला मार्टिनियर कालेज में जाकर शरण ली। दिलकुशा की सुरक्षा के लिए केपवेल ने बारह सौ सैनिकों को वहाँ



ला मार्टिनियर कालेज

चोकसी रखने के लिए छोड़ा ।

अग्रेजो ने क्रांतिकारियों का पीछा किया और उनको ला मार्टिनियर कालेज से हटा दिया । यह भवन कालेज बनने के पूर्व फ्रांसिसी 'क्लौड मार्टिन' का निवास स्थान था । मरते समय उसने इस भवन और अपनी संपत्ति का एक ट्रस्ट बनाया , जो इस कालेज को चलाता है । पूर्व योजना के अनुसार सब तबू एव भारी सामान दिलकुशा में छोड़

छियासी

दिया गया था, अतः उस रात्रि को सैनिक अपने ओवर कोटो को पहने हुए, हथियार बगल में दबाए हुए, जमीन पर डी सो गए। रात्रि को रेजीडेन्सी के निवासियों ने नीलो रोशनी को अधिक निकट देखा। आज वह ला मार्टिनियर कालेज की छत से टिमटिमा रही थी। पास ही केबेने छत के ऊपर आग जला रहा था। सकेतो द्वारा यह तय हो गया था कि यदि आग जलने का सकेत मिले, तो समझ लेना चाहिए कि अगले दिन प्रातः काल रेजीडेन्सी की सेना को घेरे से निकल कर मार्ग के मकानों को ले लेना है। इस प्रकार रेजीडेन्सी के व्यक्ति अधिक से अधिक सुरक्षापूर्वक रेजीडेन्सी खाली कर दिलकुशा पहुँच सकते थे।

अगले दिन प्रातः काल सैनिकों को चाय के साथ तीन दिन का राशन दिया गया। इसके यह अर्थ थे कि अगले तीन दिन बहुत ही अनिश्चित होंगे, भोजन की व्यवस्था की भी संभावना कठिनता से ही होगी, और युद्ध भी कितने समय तक चलेगा और कैसा रूप ले लेगा, यह भी नहीं कहा जा सकता था। हर समय सैनिकों को युद्ध के लिए तैयार रहना था। सैनिकों को सचेत किया गया कि चूँकि लड़ाई घिरे हुए स्थानों में होगी अतः वारुद का प्रयोग कम से कम किया जाए। पास की लड़ाई में जिममे हाथापाई की अधिक संभावना थी, शत्रु एवं मित्र, दोनों पक्ष समान रूप से घायल हो सकते थे। सर कोलिन केपवेल ने सिपाहियों को यह आदेश दिया—

सतासी

“सिपाहियों ! तुम्हें कठिन कार्य करना है। जहाँ तक सभव हो तीन-तीन सैनिक साथ-साथ रहे। घिरे हुए स्थानों में पहुँचते ही सगिनो का प्रयोग करो। मध्यवर्ती सैनिक को सगिन से आक्रमण करना चाहिए, और उसके दाएँ बाएँ वाले सैनिकों को उसकी सहायता करनी चाहिए। किलेबंदी के अंदर बंदूक की गोलियाँ न चलाई जाएँ, क्योंकि उससे अपने पक्ष के लोग भी घायल हो सकते हैं।”

नहर को पार कर गोमती नदी के दाएँ किनारे एक मील चल-कर अग्रेजी सेना बाईं ओर घूम कर सिकंदरवाग पहुँची। सुबह के नौ बजे थे। नदी के किनारे कुहरा छाया हुआ था। अग्रेजों को मार्ग में किसी प्रकार की रुकावट नहीं मिली। सँकरे मार्ग के दोनों तरफ मिट्टी की दीवालें थी, जो आम के वगीचों की घेरेबंदी थी। यह अग्रेजी सेना का भाग्य ही था कि मार्ग के किनारे की दीवालें के पीछे क्रांतिकारियों ने किसी प्रकार का प्रबन्ध नहीं किया था। सिकंदरवाग के चारों तरफ एक बीस फुट ऊँची मजबूत दीवाल थी, और उसका क्षेत्रफल १५० वर्ग गज था। केपवेल की सेना और रेजीडेन्सी के मध्य यह क्रांतिकारियों की एक महत्वपूर्ण चौकी थी।

सिकंदरवाग में दो हजार चुने हुए वीर क्रांतिकारी एकत्र थे। उसकी दीवालें में प्रति गज की दूरी पर छेद थे, जहाँ से आक्रमणकारियों पर गोलावारी की जा सकती थी। घेरे

अठासी

के अंदर कुछ दुमजिले मकान थे, जहाँ से शत्रु पर दूर-दूर तक मार की जा सकती थी। क्रांतिकारियों ने निश्चय किया था कि वे अत समय तक लड़ते रहेंगे। मर भले ही जाएँ किन्तु भागे नहीं।

जब क्रांतिकारियों ने अंग्रेज फौज देखी तो उन्होंने उस पर तोप और बंदूको से गोलाबारी की। अंग्रेज सिपाही यत्न तब गिरने लगे, अत उनको लेटने की आज्ञा दी गई। अंग्रेजों की तोपों से भी सिकंदरबाग की दीवाल को तोड़ने के लिए गोलाबारी की गई, लेकिन उस पर कोई विशेष असर नहीं हुआ। अकस्मात् एक अंग्रेज सिपाही को दीवाल में प्रवेश करने योग्य एक दरार दिखाई दी। अंग्रेज सेना उससे प्रवेश कर गई। अब क्रांतिकारियों और अंग्रेज सैनिकों में सगीन और तलवार का भयंकर युद्ध हुआ। न दया की भीख माँगी गई और न किसी को उसकी आशा ही थी। प्रत्येक क्रांतिकारी अपने स्थान पर लड़ता हुआ मारा गया। घायल और धराशायी क्रांतिकारियों में इतना जोश था कि उन्होंने अंग्रेज सैनिकों से कहा कि यदि हम उठ पाते तो तुम्हें मार डालते। क्रांतिकारियों की लाशें इस प्रकार पट गई थी कि एक के ऊपर एक, उनकी ऊँचाई चार फुट तक हो गई थी। अवध क्षेत्र की यह सबसे भयंकर लड़ाई थी, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अपने स्थान पर लड़ता हुआ मारा गया। जहाँ पर वह था वही डटा रहा, हटा नहीं।

सिकंदरबाग के बीच में पीपल का एक घना वृक्ष था। उसके नीचे पानी से भरे मिट्टी के कई मटके रखे थे। मार-काट के पश्चात् अंग्रेज सैनिक अपनी प्यास बुझाने के लिए पीपल के वृक्ष के नीचे आए। वहाँ उन्हें ठंडा जल और ठंडी छाँह दोनों मिले। कैप्टन डौसन ने देखा कि पेड़ के नीचे कई मृत अंग्रेज सैनिक पड़े हैं। उनके घावों का निरीक्षण कर वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा, कि वे सब किसी ऊँचे स्थान से गोली चलाकर मारे गए थे। उसको सदेह हुआ कि पीपल के पेड़ पर छिप कर कोई व्यक्ति गोली चला रहा था। उसने उस वृक्ष का निरीक्षण कर-वाया। एक व्यक्ति वहाँ छिपा बैठा था। उस पर निशाना लगाया गया, और वह वृक्ष से लुढ़क पड़ा। वह एक वीरांगना थी जो लाल जैकेट और गुलाबी पैजामा पहने हुए थी। उसके पास दो पिस्तौलें थी। उसने आधा दर्जन से अधिक अंग्रेज सैनिकों को मार डाला था।

सिकंदरबाग से रेजीडेन्सी की ओर केवल पाँच सौ गज की दूरी पर शाह नजफ है। यह नवाब गाजी उद्दीन हैदर का मकबरा है। उसके चारों तरफ एक मजबूत दीवाल थी। दीवाल के चारों तरफ मिट्टी के कच्चे मकान थे। दोपहर का समय था। कैंपबेल की यह इच्छा थी कि गोधूलि बेल तक शाह नजफ को भी ले लिया जाए। अंग्रेजों ने शाह नजफ की दीवार पर गोलाबारी प्रारंभ की। गोमती नदी

नव्वे

के पार से क्रांतिकारियों ने भी अग्रेज आक्रमणकारियों पर गोलावारी शुरू की ।

शाह नजफ की रक्षा करने वालों में कुछ तीरदाज भी थे, जो धनुष और बाण का प्रयोग कर रहे थे । यह देखकर विस्मय होता है कि जिस युग में इनफील्ड रायफल का प्रयोग होता था, उस युग में तीर और कमान का भी प्रयोग हो रहा था । उनके तीर बड़े वेग एवं शक्ति से सही निशाने पर बैठते थे । एक सिपाही ने अपना आँखों देखा हाल इस प्रकार लिखा है—उसके समीप एक सिपाही के सिर को भेदता हुआ तीर सिर के पीछे एक फुट बाहर निकल गया । दूसरे सिपाही के दिल को छेदता हुआ तीर छ गज पीछे जमीन पर गिर पड़ा । सिपाही तड़पा और तुरत मर गया ।

अग्रेजों पर शाह नजफ और नदी के पार से गोलावारी हो रही थी । तीन घंटे की गोलावारी का भी शाह नजफ की मजबूत दीवाल पर कोई असर नहीं पड़ा था । दीवाल के चारों तरफ की झोपड़ियों को जला दिया गया था । अग्रेजी सेना ने दीवाल पर चढ़कर आक्रमण करने की सोची, लेकिन क्रांतिकारियों ने उन पर ईंट, खौलता पानी, तेल में भीगे हुए जलते कपड़े डालकर वार किया और अदर नहीं आन दिया । केपवेल ने सिपाहियों को इन शब्दों में ललकारा—
“सैनिको, याद रखो । रेजीडेन्सी के अदर औरत और बच्चों का जीवन सकट में है । उनको बचाना आवश्यक है । प्रश्न यह नहीं उठता है कि तुम रेजीडेन्सी को ले सकते हो

या नहीं। उसे तुम्हे हर हालत में लेना है।”

अकस्मात् शाह नजफ में बिगुल बजा। उसका अर्थ था कि स्थान छोड़ कर कूच कर दो। अंग्रेज सशय में पड़ गए कि इसका क्या अर्थ है। इसमें कोई चाल तो नहीं है? शाह नजफ की किलेबंदी के अंदर सुरक्षित सेना क्यों कर वहाँ से हटने लगी। लेकिन कुछ समय पश्चात् गोलावारी भी बढ़ हो गई। इससे अंग्रेजों को विश्वास हो गया कि बिगुल का बजना कोई चाल नहीं थी, बरन वास्तविकता थी। बात यह थी कि शाह नजफ में क्रांतिकारियों ने पर्याप्त मात्रा में बारूद एकत्र कर रखा था, और उन्हें भय हो गया था कि तोप के गोलों के लगातार आक्रमण से यदि बारूद में आग लग गई, तो वे भी उसमें भुन जाएँगे।

प्रश्न यह उठता है कि क्यों क्रांतिकारी बारूद के ढेर को छोड़ कर चले गए, यदि एक क्रांतिकारी वहाँ रुक जाता, और अंग्रेज सेना के अंदर आने पर विस्फोट कर देता तो सैकड़ों अंग्रेज सैनिक मर जाते।

१७ नवंबर को रेजीडेन्सी में यह संदेश प्रसारित किया गया—

“कल रात्रि १८ नवंबर को प्रत्येक व्यक्ति को रेजीडेन्सी छोड़ना है। अपने साथ उतना ही सामान ले जा सकते हैं, जितना कि स्वयं ले जा सके।”

जिस समय कोलिन केपवेल सिकंदरबाग में लड़ रहा था,

बानवे

उस समय हेवलाक रेजीडेन्सी और शाह नजफ के मध्य की क्रांतिकारी चौकियों पर कब्जा कर रहा था। अब रेजीडेन्सी खाली करने वालों के लिए रेजीडेन्सी से दिलकुशा तक सुरक्षित मार्ग बन गया था। मार्ग को अधिक सुरक्षित बनाने के लिए सब प्रकार की सावधानियाँ बरती गई थी। खुले हुए स्थानों को कनातों से ढक दिया गया था, ताकि निशाने वालों से रेजीडेन्सी छोड़ने वाले बच सकें। ऊँची सड़कों में खाइयाँ खोद दी गई थी। स्त्रियों को डोलियों से उतरकर, खाइयों को पैदल पार करना पड़ा था। यह तय किया गया था कि पहले महिलाएँ, बच्चे और घायल दिलकुशा पहुँचा दिए जाएँगे। इसके पश्चात् रेजीडेन्सी की पुरानी सेना ब्रिगेडियर इगलिस के साथ रहना होगी। नदी के किनारे के स्थानों से हेवलाक की सेना इगलिस की सेना से आ मिलेगी। वे मोतीमहल की अग्रिम चौकी को पार कर शाह नजफ में रुक जाएँगे। केप-वेल सिकंदरबाग में अपने तोपखाने और पैदल सेना के साथ तैयार रहेगा। यदि क्रांतिकारियों ने रेजीडेन्सी से निकलने वालों का पीछा किया तो वह उनके प्रयास को विफल करेगा, और तब तक चौकसी करेगा, जब तक कि आखिरी आदमी सहो सलामत दिलकुशा न पहुँच जाए।

२२ नवंबर को रेजीडेन्सी की पुरानी सेना ने अर्धरात्रि को रेजीडेन्सी से प्रस्थान किया। क्रांतिकारियों को सशय न हो कि रेजीडेन्सी खाली की जा रही है, इसीलिए सब मकानों

मे मोमवत्ती एव लालटेने जलती हुई छोड़ दी गई थी। इगलिस रेजीडेन्सी की पुरानी सेना का कमांडर था। उसने इसे अपना विशेषाधिकार समझा कि उसे ही सबसे बाद रेजीडेन्सी को छोड़ने का श्रेय मिलना चाहिए। कहा जाता है कि उटरम ने मुस्करा कर अपना हाथ इगलिस की ओर बढ़ाया और कहा—“हम साथ-साथ निकले।”

इस पर इगलिस ने कहा—“श्रीमान, आप मुझे अपने मकान के दरवाजे को बंद करने की आज्ञा देंगे।”

लेकिन रेजीडेन्सी से सबसे बाद में निकलने वाला व्यक्ति इगलिस नहीं कैप्टन वाटरमैन था। जब रेजीडेन्सी खाली की जा रही थी, तो वह सोता रह गया था। नींद खुलने पर वह अपना होश-हवास खो बैठा। लेकिन भाग्यवश कुछ दूरी पर उसे आखिरी टोली के व्यक्ति जाते देखे, दौड़ कर वह उनके साथ हो लिया।

यह कहा जाता है कि रेजीडेन्सी से भूखे लोग जब दिलकुशा पहुँचे थे तो उन्होंने एक ही दिन में बीस दिन का राशन चट कर दिया था।

रेजीडेन्सी पर ३० जून को घेरा डाला गया था और २२ नवंबर को पाँच माह पश्चात घेरे में आए हुए व्यक्तियों को छुटकारा मिल पाया था। लेकिन अभी लखनऊ नगर और अवध का क्षेत्र क्रांतिकारियों के पूर्ण अधिकार में था। सर कलिन केपवेल को अभी बहुत कुछ करना बाकी था।

चौरानवे

सिंहावलोकन

हेबलाक और उटरम की सम्मिलित सेना, २२ नवंबर को रेजीडेन्सी से बाहर निकलने में सफल हुई थी। इसके दो माह पूर्व अग्रेजों ने दिल्ली भी ले लिया था। इन दो घटनाओं ने सन '५७ की क्रांति को नया मोड़ दिया। अब तक क्रांतिकारी अग्रेजों की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली थे, किंतु अब अग्रेजों का पलड़ा भारी पड़ने लगा। उनको निरंतर विलायत से सैनिक सहायता मिलने लगी।

अवध के क्रांतिकारी निश्चय ही चिनहट के युद्ध के पश्चात् रेजीडेन्सी को ले सकते थे, लेकिन वे समय के महत्व को समझ न पाए। क्रांतिकारी युद्ध को खींचते रहे। उनको इस बात का आभास नहीं हो पाया कि युद्ध जितनी जल्दी खतम हो जाएगा उनकी विजय की उतनी ही अधिक संभावना होगी। वे यह समझ नहीं पाए कि जितना ही

पचानवे

अधिक समय खिचता जाएगा उतनी ही अधिक अंग्रेजों की शक्ति भी बढ़ती जाएगी ।

यदि अवध के क्रांतिकारी नेता दूरदर्शी होते और उनका दृष्टिकोण अखिल भारतीय होता तो रेजीडेन्सी के पश्चात उनको कानपुर के क्रांतिकारियों को सहयोग देना चाहिए था । लेकिन अवध के क्रांतिकारियों को लखनऊ के अतिरिक्त न कुछ दिखा और न कुछ सूझा । कानपुर से ही तो उनको दवाने के लिए अंग्रेजी फौज आती । यदि कानपुर और लखनऊ के क्रांतिकारियों की सहयोजना होती तो वे हेवलाक को चक्की के दो पाटों के बीच के दानों की भाँति कभी भी पीस सकते थे । उनको केवल एक साथ हेवलाक पर दोनों तरफ से आक्रमण करना था—कानपुर के क्रांतिकारियों को पीछे से और लखनऊ के क्रांतिकारियों को आगे से ।

सर कोलिन केपवेल रेजीडेन्सी के घेरे में आए हुए व्यक्तियों को छुटकारा दिलाने में सफल हुआ था । घेरे से निकाल कर उसने उन्हें आलमबाग पहुँचा दिया था । यहाँ लगभग चार हजार सैनिकों की छावनी थी । इस समय केपवेल को कानपुर से समाचार मिला कि ताँतिया टोपे के नेतृत्व में ग्वालियर की सेना सक्रिय हो रही है । वह उतरम को आलमबाग छोड़कर कानपुर की ओर रवाना हुआ ।

इस समय आलमबाग की अवध में लगभग वही स्थिति हो

छानवे

गई थी, जो पहले रेजीडेन्सी की थी। रेजीडेन्सी के घेरे से अंग्रेज बाहर निकल आए थे। किंतु आलमबाग में भी वे पूर्णतया सुरक्षित नहीं थे। आलमबाग में क्रांतिकारियों ने कई आक्रमण किए थे। स्वयं हजरत महल ने भी एक बार अपने नेतृत्व में उस पर आक्रमण किया था। मौलवी अहमदउल्लाह शाह ने भी उसको लेने के कई प्रयत्न किए थे, लेकिन विफल रहा था। क्रांतिकारियों के लिए यह गहत्वपूर्ण था कि कोलिन केपवेल के लौटने से पूर्व ही आलमबाग की सेना को नष्ट कर दिया जाए। उसके पहुँचने पर अंग्रेजों की शक्ति दुगुनी हो जाती किंतु क्रांतिकारी आलमबाग को लेने में सफल नहीं हुए।

आलमबाग की चौकी कोलिन केपवेल की अग्रिम चौकी का महत्व रखने लगी थी। ताँतिया टोपे से निपट कर उसे पुनः लखनऊ वापस लौटना था। अभी नगर क्रांतिकारियों के हाथ में था, और संपूर्ण अवध में यत्न तत्न क्रांतिकारियों का जमघट था।

दिसंबर के प्रारम्भ में कोलिन केपवेल लखनऊ की ओर रवाना हुआ। जग बहादुर की गोरखा सेना भी उसकी मदद के लिए आ पहुँची थी। हेनरी लारेन्स के भाई जॉन लारेन्स ने पंजाब से भी सेना भेज दी थी। पंजाब को अंग्रेजी शासन में आए केवल छ वर्ष हुए थे, लेकिन जॉन लारेन्स ने वहाँ ऐसा जनप्रिय शासन स्थापित किया था कि सिख अंग्रेजों

सतानवे



लखनऊ नगर पर अंग्रेजों का कब्जा हो जाने के बाद लगभग ६०००
 क्रांतिकारियों ने बेगम हजरतमहल और फैजाबाद के मौलवी के
 नेतृत्व में मूसलाबाग की मोर्चेबंदी की थी। सर जेम्स उटरम इस पर
 १६ मार्च १८५८ के पहले कब्जा न जमा सका। और कब्जा करने
 पर उसके हाथ केवल इमारत आई, क्रांतिकारी नहीं।

के परम मित्र बन गए थे। अब अंग्रेजी सेना में सैनिकों की
 कमी न रह गई थी। केपवेल पहली मार्च '५८ तक लखनऊ
 नगर पर पूर्ण अधिकार करने में सफल हुआ था। अवध में

ज्ञानवे

लड़ाई चलती रही, क्योंकि क्रांतिकारियों की टोलियाँ जगह-जगह बिखरी लड़ती रही ।

लखनऊ-विजय के पश्चात् लूट मार प्रारम्भ हुई । प्रत्येक विजित नगरी की भाँति लखनऊ भी श्रीविहीन हो गई थी । अधिकांश सपन्न लोग तो पहले ही नगर छोड़ कर चले गए थे । अंग्रेज, सिख और गोरखे सिपाहियों ने तो उसे लूटा ही, साथ ही नगर के लुच्चे और लफंगो ने भी लूट में पूरा भाग लिया । नगर में नाटकीय दृश्य होने लगे थे । जिसकी समझ में जो आया उसने वही किया । मनुष्यों में किसी प्रकार का नियन्त्रण नहीं रह गया ।

युद्ध काल में कई घरों से दरवाजा बंद करके लोग लड़े थे । इन घरों में बारूद की बोरियों को दियासलाई दिखाकर अदर फेंक दिया जाता था । भुनी और जली हुई लाशें वही सड़ती रही थी । नगर में भयंकर दुर्गन्ध फैल गई थी । कई सहस्र व्यक्ति नगर की सफाई करने एवं घरों से मूर्दे निकालने में लगाए गए थे । लखनऊ नगर एवं उसके समीप के क्षेत्र में मनुष्य, घोड़ों, गधों आदि की लाशें सड़ती रही, और मक्खियों के कारण जीना कठिन हो गया ।

युद्ध का अन्त हो गया था, लेकिन युद्धजनित घृणा एवं अत्याचारों के प्रतिफल बदला लेने का दूसरा दौर प्रारम्भ हो गया था । अंग्रेज विजयी हो गए थे । उनके हाथ में शक्ति

निन्नानवे

थी। उन्होंने दोषी एव निर्दोष व्यक्तियों में किसी प्रकार का अंतर नहीं रक्खा। जो मिला उसे फाँसी पर लटकवा दिया। गाँव के गाँव जला दिए गए। न स्त्री, न पुरुष और न बच्चों का ही विचार किया गया। इन अत्याचारों के फलस्वरूप भारतवासियों एव अंग्रेजों में स्थायी वैमनस्य हो गया। दोनों जातियों ने एक दूसरे का विश्वास छोड़ दिया। उनमें कटुता बनी रही। इसका अंत तभी हुआ जब भारत स्वतंत्र हो गया।

कई जमींदार नवाबी व्यवस्था में स्वयं छोटे-मोटे नवाबों के सदृश्य थे। अपनी रय्यत पर उनका अपरिमित प्रभाव था। क्रांति में भाग लेने के फलस्वरूप वे राजा से रक हो गए थे। उनकी जमींदारियाँ छीन ली गई थी, और उन लोगों को दे दी गई थी जिन्होंने अंग्रेजों का साथ दिया था। इस प्रकार अवध में अंग्रेजों के पिटू एक नए जमींदार वर्ग का सृजन हुआ।

अवध की क्रांति का वास्तविक नेता एव सेनानी मौलवी अहमदउल्लाह शाह था। अवध में वह अंग्रेजों से निरंतर लड़ता रहा, और जब अंग्रेजों ने अवध पर अधिकार जमा लिया, तो वह रूहेलखंड जा पहुँचा। वहाँ भी उसने स्वतंत्रता संग्राम का संगठन किया। अवध के वीर सेनानी अहमदउल्लाह शाह का विश्वासघात पूर्वक वध कर दिया गया। चिनहट के युद्ध में वरकत अहमद ने सर हेनरी

लारेन्स को बुरी तरह हराया था। लेकिन यह आश्चर्य का विषय है कि आगे चलकर वरकत अहमद के सदृश्य सुयोग्य एव दक्ष सैनिक को किसी महत्वपूर्ण सैनिक अभियान का संचालन करने का अवसर नहीं दिया गया। बेगम हजरत महल ने नेपाल में जाकर शरण ली।

अंग्रेजी पक्ष के उल्लेखनीय सेनानायक हेवलाक, उटरम, सर हेनरी लारेन्स एव सर कोलिन केपवेल थे। हेवलाक की कब्र आलमवाग और सर हेनरी लारेन्स की कब्र रेजीडेन्सी में है। हेवलाक युद्धजनित परिश्रम एव बीमारी से मरा। सर हेनरी लारेन्स गोले की मार से वीर गति को प्राप्त हुआ था। 'कानपुर का कसाई' नील भी रेजीडेन्सी में घुसते समय एक गोली का शिकार हुआ। हडसन, जिसने बहादुर शाह के दो लड़कों को गोली से मारा था लखनऊ में मारा गया। केबेने ने सर कोलिन केपवेल के अभियान में पथ-प्रदर्शक का कार्य किया था। उसे वीरता के सबसे बड़े पदक विक्टोरिया क्रॉस से विभूषित किया गया, और युद्ध के पश्चात वह सिविल जज बना दिया गया।

कपनी के शासन का अंत हुआ। १ नवंबर १८५८ को ब्रिटेन की सम्राज्ञी ने भारत का शासन अपने हाथ में लिया। यह जौन कपनी का मृत्यु दिवस था। स्वयं ब्रिटेन की पार्लियामेंट के सीधे संरक्षण में भारत का शासन प्रारंभ हुआ।

युद्ध के फलस्वरूप लखनऊ रेजीडेन्सी खडहर हो गई थी।

एकसौ एक

यह तब से उसी दशा में है, और सन '५७ की क्रांति की याद दिलाती है। यह भारत सरकार की एक सरक्षित इमारत है, और अपना ऐतिहासिक महत्व रखती है।

जब भी तुम्हें अवसर मिले, तुम लखनऊ जाओ और वहाँ की इस प्रसिद्ध इमारत को अवश्य देखो। रेजीडेन्सी में तुम्हें सन सत्तावन की क्रांति से संबंधित अनेक चित्र, फोटो, नक्शे आदि मिलेंगे। उनकी सहायता से तुम्हें उस इतिहास को समझने में मदद मिलेगी जो तुमने इस पुस्तक में अभी पढ़ा।

रेजीडेन्सी के खडहरो से यदि तुम दोस्ती कर सको तो वहाँ की एक-एक ईंट तुम्हें अपनी कहानी बताएगी। दिखाएगी तुम्हें वह तस्वीर जो उसने अपनी आँखों से देखी थी। सुनाएगी तुम्हें वह दास्तान जो वीरता, बर्बरता और देशप्रेम से पगी हुई है।

सन '५७ की क्रांति के ठीक सौ वर्ष पश्चात् रेजीडेन्सी की निचली भूमि में गोमती के किनारे, स्वतंत्र भारत ने सगमरमर का एक स्तंभ उन क्रांतिकारियों की याद में बनवाया है जिन्होंने अपना जीवन भारत की स्वतंत्रता के लिए अर्पित किया था। सगमरमर के स्तंभ पर आलेख है—

सौ दो

“भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के
अज्ञात शहीदों की
पावन स्मृति में
जिनका बलिदान हमें,
अनंत काल तक प्रेरणा देगा ।”

प्रति वर्ष शहीद-दिवस को इस स्थान से लखनऊ निवासी
गोमती नदी में दीप-दान करते हैं। सैकड़ों दीपक एक के
बाद एक तैरते हुए दूर तक चले जाते हैं। ऐसा प्रतीत होता है
जैसे आकाश के तारे ही शहीदों की पावन स्मृति में आकाश
दीप बन कर गोमती नदी में उतर आए हों। ●

9541083 50225 8A 38L

This book was taken from the Library on
the date Last stamped A fine of 10 paise will
be charged for each day the book is kept over
time

6 DEC 97 375 (9694)

22 DEC 97 329 (9294)

44

लखनऊ रेजीडेन्सी का घेरा

श्रीचरण काला



सामाजिक विज्ञान, एक मानविकी विभाग
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण

का
आत्म-
कर सकें,
मि देश-प्रेम की

प्रथम संस्करण

मार्च १९७२ • चैत्र १८९४

P U 2 T

© राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, १९७२

मूल्य : दो रुपए

पृष्ठ १ में, संयुक्त ऐनुल आबेदीन, सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और
राष्ट्रीय शिक्षा संस्थान भवन, श्री अरविन्द मार्ग, नई दिल्ली-१६
प्रिण्ट तथा न्यू इंडिया प्रिंटिंग प्रेस, खुरजा में मुद्रित।

प्रस्तावना

पाठ्यपुस्तकों के अतिरिक्त, बालक की इच्छा कुछ और भी पढ़ने की होती है। हमारे देश में आजकल उसे जो कुछ पढ़ने को मिलता है वह प्रायः कोरी कल्पना तक ही सीमित रहता है। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् ने इस कमी को अनुभव किया है और कुछ रोचक पुस्तकें प्रकाशित करने की योजना बनाई है जिनमें कि बालकों का ज्ञानवर्धन हो सके और साथ ही उनमें स्वयं पढ़ने की प्रवृत्ति जाग्रत हो सके। यह कार्य सामाजिक विषय के क्षेत्र में सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी विभाग कर रहा है।

बालक का भावात्मक विकास सयत एवं सतुलित हो इस कार्य में सहायक पुस्तकें काफी योग दे सकती हैं क्योंकि वे उसके जीवन, वातावरण, परिस्थितियों एवं समाज और पदार्थों का एक ऐसा रूप उपस्थित कर सकती हैं जो सयत हो, वास्तविक हो, सच्चा एवं सरल हो। जिसमें बालक स्वयं को रख कर अपने को देख, समझ और परख सके।

आज की विषम परिस्थितियों में ऐसी सहायक पुस्तकों का महत्व और भी बढ़ गया है जो बालकों में आत्म-विश्वास, आत्म-सम्मान और अनुशासन की भावना जाग्रत एवं विकसित कर सकें, जो उनमें राष्ट्रीय एकता के भाव भर सकें और उनमें देश-प्रेम की भावना जाग्रत कर सकें।

इन कुछ सिद्धांतों को सामने रख कर ये सहायक पुस्तकें तैयार की गई हैं। इनमें जो भी ज्ञान दिया गया है वह रुचिकर घटनाओं के माध्यम से सीधी, सरल एवं प्रभावोत्पादक भाषा में दिया गया है। बालकों की आवश्यकताओं, पठन-रुचियों और भावनाओं का भी पूरा-पूरा ध्यान रखा गया है।

मुझे आशा है ये पुस्तकें बालकों की ज्ञान-वृद्धि में सहायक होकर उचित भारतीय दृष्टिकोण का निर्माण करने में उपयोगी सिद्ध होगी।

स० वि० चंद्रशेखर अय्या

निदेशक

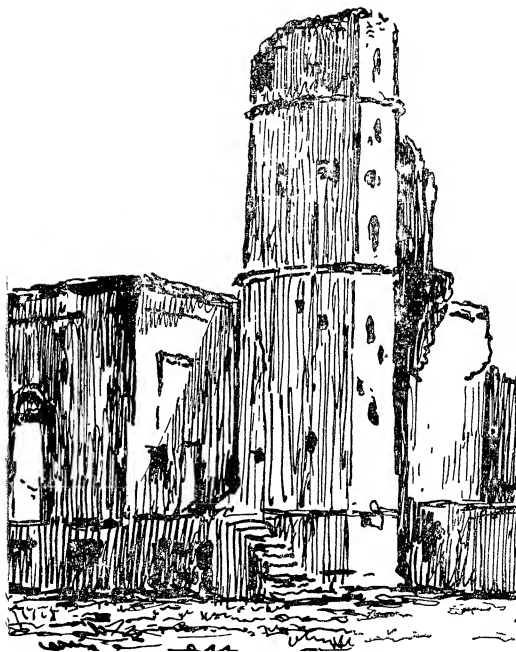
अगस्त १९७१

नई दिल्ली

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद

विषय-सूची

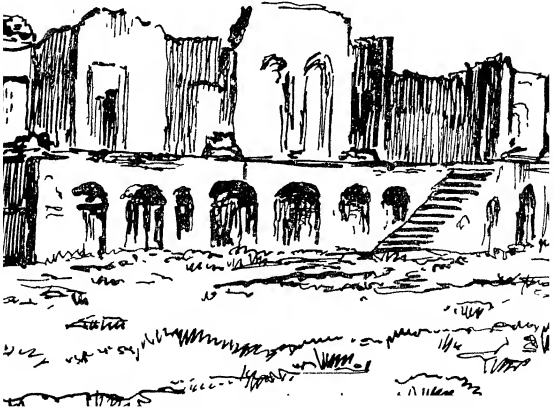
	पृष्ठ
लखनऊ रेजीडेन्सी	१
अवध का क्षुब्ध वातावरण	६
क्रांति की चिनगारी	२०
युद्ध की तैयारी	३०
रेजीडेन्सी के घेरे में जीवन	३६
रेजीडेन्सी का मुक्ति प्रयास	५२
हेबलाक का अवध छोड़ना	६३
मददगार स्वयं घेरे के अंदर	६८
रेजीडेन्सी का सफल मुक्ति प्रयास	८१
सिंहावलोकन	९५



लखनऊ रेजीडेन्सी

लखनऊ रेजीडेन्सी • • • सन १८५७ • • • भारतीय
स्वतन्त्रता युद्ध का प्रथम सग्राम ।

अवध के क्रांतिकारियों ने लखनऊ रेजीडेन्सी को घेर रखा
था,। उस पर दिन-रात गोलावारी हो रही थी। रेजीडेन्सी
की मीनार तोप के गोलों की मार से टूट गई थी। मकानों
की छतें गोलों के धमाकों से चकनाचूर हो गिर गई थी।



दीवाले जगह-जगह टूट गई थी और सर्वत्र उन पर गोलो के निशान बन गए थे । रेजीडेन्सी के तमाम भव्य भवन खडहर हो गए थे । आज भी वे खडहर उसी दशा में विद्यमान हैं ।

रेजीडेन्सी का यह घेरा पाँच महीने तक बना रहा और उस पर निरंतर गोलाबारी होती रही थी ।

(लखनऊ रेजीडेन्सी नगर का प्रमुख दर्शनीय स्थान है । वह गोमती नदी के दाएँ किनारे एक टीले पर स्थित है । उसकी स्थिति की तुलना हीरे की कनी से की गई है । यह तैत्तिस एकड़ क्षेत्र में फैला है, इसमें सोलह भवन थे । गोमती नदी के दाईं ओर लगभग तीन सौ गज चौड़ा मैदान है, जो क्रमशः रेजीडेन्सी के मध्य मैदानी भाग तक लगभग एक हजार फुट की ऊँचाई तक उठता हुआ चला जाता है । नदी के किनारे से रेजीडेन्सी पहुँचने के लिए हल्की चढ़ाई तय करनी पड़ती है ।)

रेजीडेन्सी के समस्त भवन टीले के ऊपर चौरस मैदानी भाग में बने थे जिसके चारों ओर फैला हुआ ढालू मैदान था । इस कारण रेजीडेन्सी की किलेबंदी सरलता से की जा सकती थी । यदि मैदानी भाग की परिक्लृष्ट की जाए तो हम देखेंगे कि ढालू भाग के प्रारंभ में ही उस समय की रक्षा पक्ति थी, जो मुनारो के द्वारा दिखाई गई है । इस पक्ति में खाइयाँ खोदी गई थी, दीवाले उठाई गई थी, उपयुक्त

स्थानों में तोपें लगाई गई थी और रक्षार्थ बचाव के अन्य उपाय किए गए थे। इस रक्षा पंक्ति में चार दिशाओं में चार प्रशस्त तोपखाने भी थे। ये तोपखाने ऐसे स्थानों पर लगाए गए थे, जहाँ से दूर-दूर तक सामने और दाएँ-वाएँ मार की जा सकती थी। पूर्व दिशा में गोमती की ओर रेडन का तोपखाना था। इससे नदी के किनारे के विस्तृत मैदान में गोलावारी की जा सकती थी। लोहे के पुल पर भी यहाँ की शक्तिशाली तोपों से गोलावारी की गई थी। जब सर हेनरी लारेन्स जो उस समय अवध का चीफ कमिश्नर था, चिनहट के युद्ध में क्रांतिकारियों से हार कर रेजीडेन्सी में शरण लेने के लिए भागकर आया था, तो क्रांतिकारी उसका पीछा कर रहे थे।

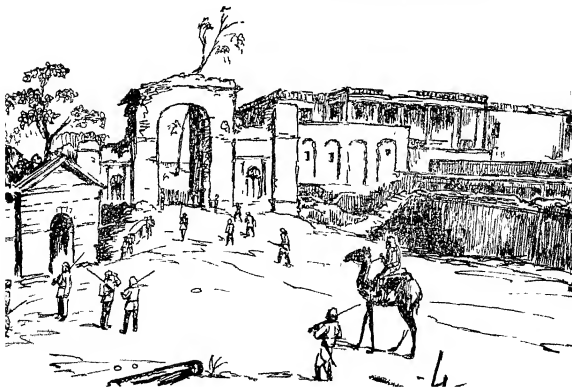
रेडन तोपखाने की मार के कारण क्रांतिकारी लोहे के पुल को पार नहीं कर पाए थे। रेजीडेन्सी के दक्षिण-पूर्व में बेली गार्ड, रेजीडेन्सी का प्रमुख द्वार था। इसके दाईं ओर बेली गार्ड तोपखाना था, जहाँ से उन पर मार की जा सकती थी, जो इस द्वार द्वारा अंदर घुसना चाहते थे।

रेजीडेन्सी के निवासियों के सहायतार्थ जब हेवलाक कानपुर से आया था तो वह इसी द्वार से रेजीडेन्सी में घुसा था। रक्षा पंक्ति के दक्षिण भाग में कानपुर तोपखाना था। दक्षिण-पश्चिम में गाबिन का तोपखाना था। इनके अतिरिक्त कई स्थानों पर तोपों का प्रबन्ध किया गया था।

आवश्यकतानुसार आक्रमण होने पर ये तोपे हमले के स्थानों पर ले जाई जा सकती थी ।

रेजीडेन्सी का प्रमुख भवन स्वयं रेजीडेंट का तिमजिला निवास स्थान था । आज भी दूर से ही इसकी टूटी मीनार दिखाई देती है । यह मीनार मुख्य भवन से कुछ ही फुट अधिक ऊँची थी । इसमें दिन-रात सतरी तैनात रहते थे, जो दूर-दूर तक देख सकते थे कि कोई शत्रु तो निकट नहीं आ रहा है । यहाँ से शत्रु की गतिविधि पर देखरेख की जा सकती थी, यही कारण है कि मीनार पर सबसेप्रबल गोलावारी हुई थी । सबसे ऊँची मजिल तो करीब-करीब

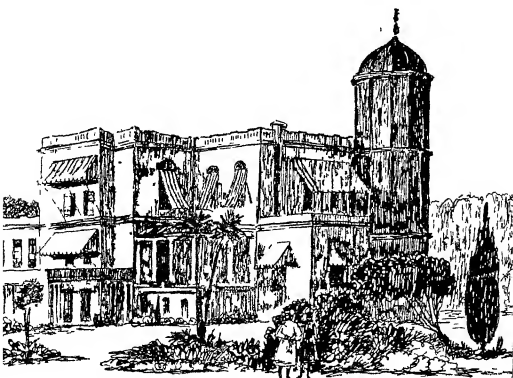
बेलीगार्ड, रेजीडेन्सी का मुख्य द्वार



गिर ही गई थी। यहाँ से निशानेबाज भी चुन-चुन कर शत्रुओं को मार सकते थे। यह मीनार अब सुरक्षित नहीं है। वह दर्शकों के लिए बंद कर दी गई है।

इसी मीनार से अंग्रेजों का राष्ट्रीय झंडा यूनियन जैक फहराता था। विदेशी सत्ता का प्रतीक भला क्योंकर फहराने दिया जाता। वह स्वदेश-प्रेमियों की आँख की किरकिरी बन गया था। गोलियों की मार से वह देखते ही देखते छलनी हो गया था। उसे विवश होकर उतारना पड़ा था। रेजीडेन्सी के घेरे के काल में वह तहखाने में लिपटा

रेजीडेन्सी का एक भाग अपने मूल रूप में



पड़ा रहा। यह वही झंडा था जिसके विषय में विलायत के राष्ट्र-कवि लार्ड टेनीसन ने लिखा था कि वह क्रांति पर्यंत रेजीडेन्सी के ऊपर फहराता रहा था और क्रांतिकारियों को चुनौती देता रहा। लेकिन इस कथन को कवि की कल्पना ही मानना चाहिए।

रेजीडेंट के निवास स्थान के नीचे एक तहखाना था, जिस में घेरे के काल में अंग्रेज औरते और बच्चे सिमटे पड़े रहते थे जिससे वे ग्रीष्म काल की गर्मी और गोलों की मार से सुरक्षित रह सकें। लेकिन तहखाने की सीलन के कारण वे स्वस्थ न रह पाए। दिन के समय भी तहखाने में इतना अँधेरा रहता था कि भोजन करते समय मोमबत्ती जलानी पड़ती थी।

तहखाने के ऊपर के कमरों में अब संग्रहालय बना दिया गया है, इसमें एक मिट्टी का मॉडल बना है, जो सन १८५७ की रेजीडेन्सी को उसी रूप में दर्शाता है। इसकी दीवारों पर तत्कालीन कलाकारों द्वारा बनाए हुए युद्ध के चित्र हैं।

इनको ध्यानपूर्वक देखने से हमें सन १८५७ की क्रांति के युद्धों के विषय में अनेक प्रकार की सूचनाएँ मिलती हैं। यहाँ वे अस्त्र-शस्त्र भी एकत्रित हैं जिनका प्रयोग इस युद्ध में हुआ था।

रेजीडेन्सी के मध्य भाग में एक मस्जिद है जो अन्य भवनों की

छह

अपेक्षा अच्छी दशा में है। इसके दो कारण हो सकते हैं। एक तो वह स्वतः ही रेजीडेन्सी क्षेत्र के मध्य भाग में होने से गोलों की मार से बच गई हो। दूसरा कारण यह भी हो सकता है कि धार्मिक स्थल होने के कारण क्रांतिकारियों ने उसे किसी प्रकार की क्षति न पहुँचाई हो।

रक्षा पक्ति की दक्षिण दिशा में मार्टिनियर की चौकी थी। इस चौकी का भार आशिक रूप से स्थानीय ला मार्टिनियर कालेज के छात्रों पर था जिन्होंने अपने कर्तव्य का पालन वीरता से किया था। इस वीरता के कार्य के लिए बाद में उन्हें एक झंडा प्रदान किया गया था। यही पर ब्रिगेड मेस एव सिख स्ववायर था जहाँ सिख सवार एव सिख पैदल सेना रहती थी। पूर्व की ओर भोजन करने का कमरा था जो युद्ध काल में अस्पताल बना दिया गया था।

रेजीडेन्सी के क्षेत्र में जगह-जगह स्मारक बने हैं। इन्हें सैनिकों ने अपने उन साथियों की याद में बनाया था जो वीर गति को प्राप्त हुए थे। इनमें सबसे दर्शनीय और कला की दृष्टि से उत्कृष्ट सर हेनरी लारेन्स का स्मारक बना है।

रेजीडेन्सी के कब्रिस्तान की चर्चा किए बिना रेजीडेन्सी के घेरे की कहानी अपूर्ण रह जाती है। यहाँ उन अंग्रेज सैनिकों की कब्रें हैं जो क्रांतिकाल में युद्ध अथवा युद्धजनित अन्य

कारणों से मर गए थे। यहाँ उल्लेखनीय कब्र सर हेनरी लारेन्स की है जिसके उत्तम सगठन के ही कारण घेराव में आए हुए व्यक्ति पाँच माह का समय काट पाए थे। वह घेराव के प्रारम्भिक काल में ही एक गोले के लगने के कारण मर गया था। उसकी कब्र पर लिखा है—

यहाँ चिर निद्रा में लेटा है सर हेनरी लारेन्स,
जिसने अपने कर्तव्य-पालन की पूरी चेष्टा की थी।

यदि ये खडहर बोल सकते तो न जाने कितनी रोचक बातें हमें बता सकते। पर न ये बोल सकते हैं और न आप बीती ही सुना सकते हैं। किंतु इनको देखकर सन १८५७ के युद्ध के विषय में हम बहुत कुछ जान सकते हैं। दीवालों पर इच-इच की दूरी पर गोलों के निशान बने हैं। ये हमें बताते हैं कि रेजीडेन्सी पर कितनी भयंकर गोलावारी हुई होगी।

रेजीडेन्सी के खडहर राष्ट्रीय निधि है। उनकी सुरक्षा का भार भारत सरकार पर है। भारतीय पुरातत्व विभाग पर देश के समस्त ऐतिहासिक भवनों की देखभाल एवं रक्षा का दायित्व रहता है। वह समय-समय पर इनकी मरम्मत भी करता है और उनको सुरक्षित रखता है।

अवध का क्षुब्ध वातावरण

लार्ड वेलेजली ने अन्य राज्यों की तरह ही अवध के साथ भी सहायक संधि की थी। इससे अवध का भी वही हाल हुआ जो सहायक संधि मानने वाले अन्य राज्यों का हुआ था। अवध में शासन व्यवस्था दिन पर दिन बिगड़ने लगी। अंतिम नवाब वाजिदअली शाह नाच-गाने और भोग-विलास में लिप्त रहने लगा। एक दिन उसे डलहौजी का पत्र मिला कि कुशासन के कारण उसका राज्य अंग्रेजी राज्य में मिला दिया जाता है। वाजिदअली शाह कर भी क्या सकता था। वह केवल हाथ मल कर रह गया।

और सन १८५७ की क्रांति के पंद्रह माह पूर्व अवध अंग्रेजी राज्य में मिला लिया गया। स्वाधीनता के खो जाने के कारण अवधवासी दुखी और असंतुष्ट थे। यह असंतोष और अधिक बढ़ा, जब उन्हें नए शासन द्वारा सुविधाएँ कम और असुविधाएँ ही अधिक मिलीं। अंग्रेजी शासन

मे दिन पर दिन सर्वसाधारण की कठिनाइयाँ बढ़ती गई ।

सर हेनरी लारेन्स को अवध का चीफ कमिश्नर बनाया गया था । उसमे मानवता थी । वह एक दूरदर्शी राजनीतिज्ञ भी था और नवाबी काल की कुव्यवस्था से परिचित था । उसने सिफारिश की कि अवधवासियों के साथ उदारता का व्यवहार होना चाहिए । 'नवाबी शासन की अपेक्षा हमे उन्हे अधिक सुविधाएँ देनी चाहिएँ । नए शासन से हमे आर्थिक लाभ नहीं उठाना चाहिए ।' लेकिन लालची कपनी अवध से दो करोड रुपया कर पाने के लिए लालायित थी । उसमे यह दूरदर्शिता कहाँ थी कि अवध मे स्थायी अंग्रेजी शासन स्थापित करने मे जनता का सहयोग लेती क्योंकि जनता की सद्भावना पर ही स्थायी राज्य स्थापित हो सकता था । कपनी ने तो यही सोचा था कि अंग्रेजी सेना की सहायता से वह अवध को अपने अधिकार मे रख लेगी । अतः नया शासन अवध की सर्वसाधारण जनता की सद्भावनाएँ प्राप्त न कर सका । विदेशी शासन अप्रिय हो गया ।

तत्कालीन इतिहासकार 'रीज' का भी यही मत है कि कपनी अपनी आमदनी बढ़ाने के लिए इतनी आतुर हो गई थी कि उसने जनता के सुख की कुछ भी परवाह नहीं की । टिकटो, अर्जियों, मकान, खाद्य पदार्थ एवं नौकाओं पर कर लगा दिए गए थे । अफीम, नमक, अनाज और स्पिरिट के ठेकेदार

नियुक्त कर दिए गए थे। अफीम पर लगाए गए कर से तो पूरे अवध में बहुत असंतोष फैला। लखनऊ नगर में यह असंतोष सबसे अधिक था। इस नगर में चीनवासियों की भाँति लोग बहुत अफीम खाते थे। एकाएक अफीम पर कर लग जाने से गरीब लोग उसे खरीद न पाए। अफीम का दाम बढ़ गया। निराश होकर कई अफीमचियों ने अपना गला काट लिया। आदमियों की बात तो छोड़िए, उस समय बुलबुलो तक को अफीम खिलाई जाती थी। बुलबुलो को लडाना उस समय का प्रमुख मनोरंजन था। दैनिक आवश्यकता की प्रत्येक सामग्री पर कर लग जाने से, और बढ़ती हुई मँहगाई के कारण अवध के लोगों में असंतोष बढ़ता ही गया।

विदेशी शासन के प्रति असंतोष अवधवासियों तक ही सीमित न रहा, वरन् उसने अंग्रेजों द्वारा बनाई गई 'बगाल सेना' के अवधी सिपाहियों को भी प्रभावित किया। बगाल सेना में अवध के डेढ़ लाख सिपाही थे। ये सैनिक स्वयं भी अंग्रेजी सैनिक प्रशासन से सतुष्ट नहीं थे। अंग्रेज अधिकारियों के रवैये से उनको विश्वास हो गया था कि अंग्रेज सरकार उनका धर्म भ्रष्ट कर उन्हें ख्रिस्तान बनाना चाहती है। कंपनी के सैनिकों के लिए एक नया कानून बना था कि नए रगहूटों को समुद्र पार कहीं भी लड़ने के लिए भेजा जा सकता है। उस समय के धार्मिक विश्वास के

ग्यारह



बंगाल सेना के सिपाही

अनुसार समुद्र पार जाने से धर्म नष्ट हो जाता था। इससे उनका विश्वास और अधिक पुष्ट हुआ कि सरकार उनका धर्म परिवर्तन करना चाहती है। जब सैनिकों को बर्मा और अफगानिस्तान जाने की आज्ञा हुई तो बहुत से सिपाहियों ने छुट्टी ले ली और अनेक सेना छोड़ कर भाग गए। वे सिपाही जो युद्ध करने के लिए गए थे, लौटने पर जाति से बहिष्कृत कर दिए गए। वे अब अछूत समझे जाने लगे थे।

उनके सहधर्मी न तो उनसे बोलते, न मिलते और न ही किसी प्रकार का ससर्ग ही रखते थे। शुद्धि कराने में उनकी कई वर्षों की गाढ़ी कमाई स्वाहा हो जाती थी।

बगाल सेना के एक-तिहाई सैनिक अवध के उच्च जाति के हिंदू थे। खान-पान, जाति-पाँति एवं विदेश यात्रा के प्रति उन पर कई धार्मिक बंधन लगे थे। सेना की नई व्यवस्था के अनुसार उनकी इन मान्यताओं पर आघात हुआ था।

ईसाई धर्म प्रचारक सार्वजनिक स्थानों में ईसाई धर्म का प्रचार करते थे। यदि वे केवल ईसाई धर्म के सिद्धांतों की ही चर्चा करते तो किसी को आपत्ति नहीं होती। लेकिन वे अपने प्रचार में हिंदू एवं मुस्लिम धर्म के प्रति कई अप्रिय एवं कटु बातें कहा करते थे। सर्वसाधारण की यह भावना थी कि ईसाई प्रचारकों पर कपनी धन व्यय करती है, और राज धर्म होने के कारण उसे विभिन्न अधिकारियों से कुछ न

तेरह

कुछ सरक्षण अवश्य प्राप्त था। अब किसी को इसमें सशय नहीं रह गया था कि फिरगी उनका धर्म नष्ट करने पर तुले हुए हैं। चर्वी वाले कार्तूस ने इस असंतोष में विस्फोट का काम किया। फील्ड मार्शल लार्ड रोबर्ट्स ने लिखा है कि कार्तूस वास्तव में गाय और सूअर की चर्वी से बनाए जाते थे।

सिपाहियों की धार्मिक भावना का कुछ भी विचार नहीं किया गया था। यह विश्वास करना कठिन है कि कार्तूस बनाने

चर्वी वाले कार्तूस ने असंतोष में विस्फोट का काम किया



वालो से कोई भूल हुई हो। उस विषय में एक तत्कालीन तुकबंदी उल्लेखनीय है।

न ईरान ने किया, न शाह रूस ने,
अंग्रेज को तबाह किया कार्तूस ने।

अवध के चीफ कमिश्नर सर हेनरी लारेन्स ने उस समय के गवर्नर जनरल लार्ड केनिंग को ६ मई, १८५७ को एक पत्र लिखा—“पिछली राति को अवध तोपखाने के एक जमादार के साथ मैंने बातचीत की। मुझे उसके इस विश्वास पर आश्चर्य हुआ कि पिछले दस वर्ष से सरकार समस्त अवध-वासियों को जबरन या धोखा देकर धर्म-परिवर्तन के कार्य में लगी हुई है। उसने हमारे किसी भी काम की सराहना नहीं की। वह बार-बार यही दुहराता रहा कि मैं तुम से वही कह रहा हूँ, जो सब कहते हैं।”

अंग्रेजों के प्रति घृणा और असंतोष की भावना ने बदला लेने की इच्छा को पुष्ट किया। सेना में इस समय अंग्रेज और भारतीय सिपाहियों का अनुपात एक और छ का था जो सेना में अनुशासन बनाए रखने की दृष्टि से ठीक नहीं था। इस विषय में एक गवर्नर जनरल ने शासन को चेतावनी दी थी कि भारत में अंग्रेज और भारतीय सैनिकों का अनुपात एक और तीन का अवश्य रहना चाहिए। सिपाहियों में यह भावना घर कर गई थी कि उन्होंने ही अंग्रेजों के लिए संपूर्ण

भारत को जीता है। फिर क्या उनमें अब वही शक्ति नहीं थी कि वे विदेशी सत्ता को उखाड़ फेंके, और अपने धर्म की रक्षा करें।

इस सकल्प को पूरा करने के लिए इस भविष्यवाणी ने भी योग दिया कि प्लासी के युद्ध के सौ वर्ष बाद भारतवर्ष में अंग्रेजी शासन का अंत हो जाएगा। अधविश्वासियों को पूर्ण विश्वास हो गया कि अब भारतवर्ष में अंग्रेजों के इने-गिने दिन ही रह गए हैं।

अंग्रेजों ने नवाबी सेना के साठ हजार सैनिकों की छँटनी कर दी थी। उनमें से बहुत कम सैनिकों को सशस्त्र पुलिस में नौकरी मिल पाई थी। नवाबी सेना से निकाले हुए ये सैनिक बेरोजगार हो गए थे। वे अपने गाँवों को लौट गए थे और अपने साथ अंग्रेजों के प्रति घृणा एवं दुर्भावना लेते हुए गए थे। अवध के प्रत्येक ग्राम में ऐसे व्यक्ति मिल सकते थे, जो विदेशी सत्ता के शत्रु थे, और जिन्हें व्यक्तिगत रूप से विदेशी शासन द्वारा हानि पहुँची थी। वे विदेशी राज्य के प्रति जहर उगला करते थे, और अपने सीमित क्षेत्र में विदेशी सत्ता के विरुद्ध प्रचार करते थे। बस समय आने पर उन्होंने अवध की जनता को संगठित किया, और सक्रिय रूप से अंग्रेजों के विरुद्ध हो गए।

जनता में असंतोष बढ़ने के कई और कारण भी थे। नई सोलह

शासन व्यवस्था में समस्त ऊँचे पद अंग्रेजों के लिए सुरक्षित हो गए थे। भारतीयों को केवल निम्न पद ही दिए जाते थे। इससे योग्य भारतीयों में विदेशी शासन के प्रति असंतोष फैला।

नवाबी सरक्षण में कारीगरों की रोजी अच्छी चलती थी परंतु विदेशी शासकों की रुचि भिन्न थी जिससे कारीगर बेकार हो गए और भूखों मरने लगे। उनकी बनाई हुई वस्तुओं के लिए खरीदार न रहे। नए शासन ने उनकी किसी भी प्रकार से सहायता नहीं की।

नवाबी शासन व्यवस्था में जमींदारों का अपना विशिष्ट स्थान था। वे राज्य के लिए भूमि कर वसूल करते थे, और अपने क्षेत्र में सुव्यवस्था भी बनाए रखते थे। अंग्रेजों ने अवध में जब भूमि का बदोवस्त शुरू किया तो वे यह मान कर चले कि भूमि का असली मालिक किसान था और जमींदारों ने जालसाजी से उनके अधिकारों को ले लिया था। इस कारण जमींदारों के कई गाँव छिन गए जिससे वे अंग्रेजों के कट्टर शत्रु बन गए।

मौलवी अहमदउल्लाह शाह क्रांतिकारियों के प्रमुख नायक थे। वह दक्षिण के रहने वाले थे लेकिन क्रांति के समय वे अवध में प्रचार कार्य करते थे। उन्होंने अवध में घूम-घूम कर अंग्रेजों के विरुद्ध क्रांति कराने के लिए हिंदुओं एवं

सत्रह

मुसलमानों को ललकारा था। उन्होंने चेतावनी दी थी कि समय आ गया है जब वे अपनी दासता की बेड़ियों को काट डालें या हमेशा के लिए दास बने रहें। वे ओजस्वी वक्ता थे। अवध के जनजागरण में उनका प्रमुख हाथ था। उनकी धारणा थी कि सशस्त्र विद्रोह की सफलता के लिए सेना से अधिक जनता के सहयोग की आवश्यकता है। वे फिरंगियों के विरुद्ध धर्म युद्ध की घोषणा करते फिरते थे।

सन १८५७ का मई मास था। अवधवासी अंग्रेजों द्वारा स्थापित व्यवस्था से खिन्न एवं दुखी थे। ऐसा कोई भी वर्ग नहीं था जो उनसे सतुष्ट हो। सर्वत्र असतोष व्याप्त था। असतुष्ट व्यक्ति प्रचार कर रहे थे। जनमत का संगठन हो रहा था। तरह-तरह की अफवाहें फैल रही थीं। नगर में हिंदी, उर्दू और फारसी में पोस्टर लगाए गए थे जिनमें हिंदुओं और मुसलमानों को ललकारा गया था कि समय आ गया है कि फिरंगियों का विनाश कर दिया जाए। नगर के कई भागों में गुड्डों को विलायती कपड़े पहनाकर सार्वजनिक स्थलों में तलवार से उनका सिर काट दिया गया था। इससे लोगों में नया जोश पैदा हो जाता था और वे अंग्रेजों को मारने के लिए लालायित रहते थे।

मई २१ को सर हेनरी लारेन्स ने लिखा कि नगर में शांति है, लेकिन जनता में असतोष है। यदि दिल्ली को तुरंत विद्रोहियों से वापस न ले लिया गया तो लखनऊ में अधिक

अठारह

समय तक शांति बनाए रखना कठिन होगा ।

कपनी के कर्मचारी भी भोग-विलास का जीवन व्यतीत करने लगे थे । उनमें वह योग्यता नहीं थी जो क्लाइव के समय में थी, जब क्लर्क एक हाथ में कलम और दूसरे हाथ में तलवार लेकर फैक्ट्री की रक्षा करता था । इस समय के अग्रेजों में यह योग्यता नहीं रह गई थी कि वे क्रांति का सामना कर पाते । बिगड़ती हुई स्थिति को वे सही प्रकार से न तो समझ पाए और न ही समय आने पर उसका सामना कर पाए ।

इस प्रकार अवध की क्रांति ने जन-आंदोलन का रूप लिया और अवधवासियों की आशा और सघर्ष का केंद्र लखनऊ रेजीडेन्सी बनी ।

वातावरण क्षुब्ध हो गया था । जनता में गहरा असंतोष फैला था । अग्रेजी राज्य को उखाड़ने के लिए वे दृढ़ संकल्प थे । स्थिति बिगड़ गई थी । वस, आवश्यकता थी केवल... एक चिनगारी की ।

क्रांति की चिनगारी

अवध की क्रांति को प्रारम्भ करने के लिए प्रभावोत्पादक घटना का होना आवश्यक था। ऐसी घटना जो सर्वसाधारण का ध्यान अपनी ओर खींच ले, और अवध की विस्फोटक स्थिति को चिनगारी प्रदान कर सके। ऐसी घटना चिनहट का युद्ध था जिसमें क्रांतिकारियों ने अंग्रेजों को बुरी तरह से हराया था।

जून की विषम गर्मी थी। दिन भर गर्म लू चलती थी। रात की दम घुटाने वाली गर्मी में सोना कठिन हो गया था। जगह-जगह तरह-तरह की अफवाहें फैल रही थी। वातावरण में बेचैनी थी—कोई नहीं कह सकता था कि कब क्या हो जाए। आखिर वह दिन आ ही गया — ३० जून १८५७, जब क्रांतिकारी और अंग्रेज एक-दूसरे से लड़ ही बैठे।

अवध के चीफ कमिश्नर सर हेनरी लारेन्स को युद्धकालीन

बीस

परिस्थिति में ब्रिगेडियर का सैनिक पद भी दे दिया गया था। इस प्रकार वह अवध क्षेत्र का सर्वोच्च सैनिक एवं असैनिक अधिकारी था, और विषम स्थिति का सामना करने के लिए स्वतन्त्रतापूर्वक निर्णय ले सकता था। हेनरी लारेन्स स्वयं योग्य व्यवस्थापक और दूरदर्शी व्यक्ति था, किन्तु उसका सैनिक अनुभव कम था। रेजीडेन्सी की रक्षा के लिए वह स्वयं वहाँ आकर रहने लगा था।

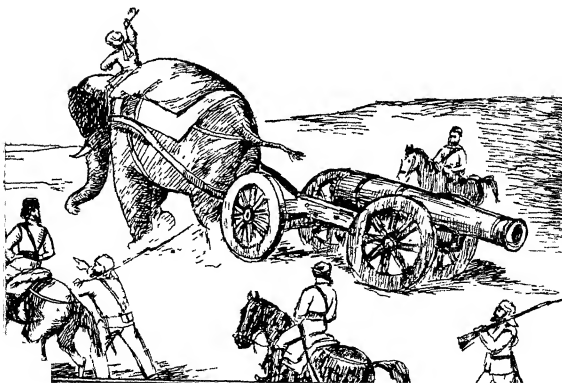
जून २६, लारेन्स को समाचार मिला कि चिनहट में क्रांतिकारियों की सेना एकत्र हो गई है। उस सेना में ५०० सैनिक, ५० घुड़सवार और एक छोटी तोप थी। लारेन्स ने भी एक सेना एकत्र की, जिसमें ३०० अंग्रेज सैनिक, १७० भारतीय पैदल सैनिक, ८४ भारतीय घुड़सवार सैनिक, ३६ स्वयंसेवक घुड़सवार, दस छोटी तोपें और एक बड़ी तोप थी, जिसे एक हाथी खींचता था।

सर हेनरी लारेन्स के लिए यह एक सुनहरा अवसर था। यदि वह क्रांतिकारियों को हराने में सफल हो गया, तो प्रारम्भ में ही क्रांतिकारियों का हौसला पस्त हो जाएगा, और अंग्रेजी शक्ति की अजेयता का डका वज्र उठेगा। अतः यह निश्चय किया गया कि तीस जून को प्रातःकाल, पौ फटते ही अंग्रेज फौज चिनहट की ओर प्रस्थान करेगी।

लेकिन कुव्यवस्था के कारण सेना तब रवाना हो सकी जब

सूर्य काफी चढ चुका था । सिपाहियों को सुबह नाश्ता भी न मिल पाया था । तीन मील चलकर सेना कुकरेल नदी के पुल पर पहुँची । सैनिकों की एक टोली को शत्रु की गति-विधि का परिचय पाने के लिए आगे भेजा गया, किंतु वे क्रांतिकारियों के बारे में कोई सूचना न दे पाए । कुछ राहगीरों ने भी यही समाचार दिया कि चिनहट में कोई क्रांतिकारी नहीं है । ऐसी स्थिति में लारेन्स को लौट जाना चाहिए था । फिर भी वह आगे बढ़ा । संभवतः वह चिनहट की जनता को अंग्रेजी शक्ति से प्रभावित करना चाहता था ।

बड़ी तोप जिसे हाथी खींचता था



दिन काफी चढ़ चुका था। सूर्य सिर पर आ गया था। जून की विकट धूप थी। दोपहरी की धूप में कदम-कदम चलना कठिन था। अपनी कसी हुई वर्दियों में सैनिक पसीने से लथपथ हो गए थे। ज्योही सड़क के मोड़ को पार कर अंग्रेजी सेना आगे बढ़ी, उसने अकस्मात अपने को क्रांतिकारियों से घिरा पाया। क्रांतिकारी सेना के सेनानायक वरकत अहमद ने बड़ी योग्यता से व्यूह रचना की थी। उसने अपनी सेना को आम के पेड़ों के पीछे इस भाँति छिपाया था कि न तो अंग्रेजों के स्काउट ही उनका पता लगा सकते थे और न राहगीर ही उनको देख सकते थे। अंग्रेजों को क्रांतिकारी सेना के अस्तित्व का तब पता चला, जब वह बुरी तरह से घिर गई। अपने आपको ऐसी स्थिति में पड़ा देख अंग्रेजी सेना निरुत्साहित हो गई, और उसमें बुरी तरह से भगदड़ मच गई। घिरी हुई सेना के पास बस एक ही चारा था कि वह भाग कर अपनी जान बचाए।

वरकत यह भली भाँति जानता था कि अंग्रेजी सेना भागकर कुकरेल के पुल से ही लौटेगी। उसके लिए उसने पहले से ही बुद्धिसवार सेना तैनात कर रखी थी, जो समय आते ही अंग्रेजी सेना को पुल पर घेर लेती। परंतु अंग्रेजों के स्वयंसेवक बुद्धिसवारों ने प्रबल आक्रमण किया जिससे पुल का रास्ता 'साफ' हो गया और अंग्रेजी सेना वापस लौटने में सफल हो गई। जिस सुंदरता के साथ वरकत अहमद ने



अंग्रेजी सेना बुरी तरह घिर गई

चिनहट युद्ध की योजना बनाई थी, यदि उसी दक्षता से वह कार्यान्वित हो जाती तो एक भी अंग्रेज सैनिक उस दिन बचकर रेजीडेन्सी न लौट पाता ।

क्रांतिकारियों ने भागती हुई अंग्रेजी सेना का पीछा किया और उन पर गोलों की मार जारी रखी । जगह-जगह अंग्रेज सैनिकों की लाशें बिखर गई थी । उनके हथियार और साज-सामान सब बिखरे पड़े थे । कुछ गोली लगने से चौबिस

गिर पड़े थे तो कुछ बिना गोली के ही जून की तपती धूप से बिलबिलाकर गिर पड़े थे। कई सैनिक प्यास और लू लगने से ही मर गए। कई स्थानों पर मार्ग में इन थके-मोड़े, भागते हुए प्यासे सैनिकों को ग्रामीण महिलाओं ने पानी पिलाया जिससे उनमें कुछ जान आई और वे रेजीडेन्सी की ओर भाग सके।

परंतु अंग्रेजी सेना का पीछा करते हुए क्रांतिकारी गोमती पर बने पत्थर और लोहे के पुल को पार न कर सके।

क्रांतिकारियों ने भागती हुई सेना का पीछा किया



रेजीडेन्सी से लोहे के पुल पर मयकर गोलावारी की गई थी, और मच्छी भवन से पत्थर के पुल पर। मच्छी भवन उस स्थान पर था, जहाँ आज लखनऊ मेडिकल कालेज है।

क्रांतिकारी पुलो को तो पार न कर सके किंतु उन्होंने गोमती नदी को विभिन्न स्थानों से पार कर लिया और शाम होने तक उन्होंने रेजीडेन्सी को पूरी तरह से घेर लिया। निकटस्थ स्थानों में पहुँच कर उन्होंने रेजीडेन्सी में रहने वालों पर गोलावारी प्रारंभ कर दी।

अंग्रेजों की हार, उनका पीछा किया जाना और रेजीडेन्सी का घेरा इस तेजी से हुआ कि कुछ समय के लिए अंग्रेज अपनी सुध-बुध खो बैठे। उनकी समझ में न आया कि यह क्या हो गया है और उनको अब क्या करना है। रेजीडेन्सी के रहने वालों में हारी हुई क्षत-विक्षत सेना के लौटने से भय और निराशा फैल गई। एक अंग्रेज महिला लेडी इंगलिस ने लिखा है—

“तुम समझ सकते हो कि सेना के हारे हुए व्यक्तियों के आने से किस सीमा तक निराशा हुई होगी। मैंने उनका लौटना ध्यानपूर्वक देखा था। वह दुःख देने वाला दृश्य था। वे किसी व्यवस्थित ढंग में नहीं लौट रहे थे। वे गिरते-पड़ते आ रहे थे। कोई घोड़े पर सवार था, तो कोई पैदल आ रहा था और कोई-कोई अन्य व्यक्तियों

छविस

का सहारा लेकर आ रहा था। कुछ घायल तोपों पर चढ़े आ रहे थे, और कुछ रेजीडेन्सी पहुँचते-पहुँचते थकान और घावों के कारण हमारी चौकी से आध मील की दूरी पर ही गिर पड़े थे। मैं नदी के पार व्रातिकारियों और उनकी बंदूकों का धुआँ स्पष्टतया देख पा रही थी। चिनहट की पराजय ने रेजीडेन्सी का घेरा समय से पूर्व करवा दिया था, जबकि उसकी किलेबंदी में भी बहुत सुधार करने वाली थी।”

यदि आक्रमणकारी उसी दिन रेजीडेन्सी पर धावा बोलते, तो यह संभव था कि वे खाइयों पर कब्जा कर लेते। लेकिन व्रातिकारी इस स्थिति का लाभ न उठा पाए।

चिनहट के युद्ध के फलस्वरूप व्रातिकारियों के हाथ पाँच छोटी तोपें व एक बड़ी होविट्जर तोप लगी, जिसे हाथी खींचता था। अंग्रेजों के २६३ सैनिक मारे गए थे और ७८ सैनिक घायल हुए थे।

उस रात्रि सर हेनरी लारेन्स ने रेजीडेन्सी से कानपुर के अंग्रेजी सेना के कमांडर हेवलाक को इस आशय का पत्र लिखा—

“आज सुबह हम शत्रु से लड़ने के लिए चिनहट गए और पराजित हुए। हमारी पाँच तोपें शत्रु के हाथ लगी। व्रातिकारियों ने हमारा पीछा किया और रेजीडेन्सी को पूर्णतया घेर लिया। व्रातिकारियों का उत्साह बहुत बढ़ा हुआ है, और

कुछ अग्रेज हतोत्साहित हैं। कल के मुकाबले आज हमारी स्थिति दस गुना खराब है। वास्तविकता यह है कि हमारी स्थिति शोचनीय है। यदि पंद्रह-बीस दिन में हमें सहायता नहीं मिलती है तो हमें बहुत-सा राशन छोड़ना पड़ेगा और बारूद को भी जलाना पड़ेगा। इससे अधिक समय हम क्रांतिकारियों के सम्मुख टिक न पाएँगे।”

कर्नल इगलिस के समान अनुभवी सैनिक अधिकारी के रहते हुए भी, स्वयं सर हेनरी लारेन्स ने चिनहट के युद्ध में नेतृत्व किया था। ऐसा उन्होंने क्यों किया कहा नहीं जा सकता। संभवतः हेनरी लारेन्स में इगलिस की अपेक्षा आत्मविश्वास अधिक था। वह क्रांतिकारियों को युद्ध में हराने के लिए लालायित था और उनको सबक सिखाना चाहता था। रणनीति के अनुसार भी सबसे अच्छा वचाव पहले शत्रु पर चोट करना था। शत्रु को करारी हार देने के दो अन्य लाभ थे। क्रांतिकारियों का मनोबल टूट जाता और अग्रेजों के पक्ष में लोगों का हौसला बढ़ जाता। वे लोग जो निश्चय नहीं कर पा रहे थे कि किसका साथ दे, अब विजयी पक्ष का साथ देने के लिए बाध्य हो जाते। क्रांतिकारियों को हराकर वह आसपास के क्षेत्र में अग्रेजी शक्ति का प्रदर्शन कर सकता था, और ब्रिटिश शक्ति की धाक जमा सकता था। लेकिन पासा उल्टा पड़ा। वह बुरी तरह हारा। इस हार का समाचार बहुत तेजी से सारे अवध में

अट्ठाइस

जगल की आग की तरह फैल गया ।

परिणाम यह हुआ कि दोनों दल भावी युद्ध की तैयारियाँ करने लगे । अंग्रेज अपने वचाव के लिए चिंतित थे और क्रांतिकारियों का उत्साह इतना बढ़ गया था कि वे अंग्रेजों को देश से निकाल कर ही मानेंगे । लखनऊ रेजीडेंसी अवध की जनक्रांति का केंद्र-बिंदु बन गई ।

युद्ध की तैयारी

क्रांति से आठ माह पूर्व ही सर हेनरी लारेन्स सजग और सचेष्ट हो गया था। उसे भावी सकट का आभास हो चला था। अवधवासी अंग्रेजी सत्ता के विरुद्ध होने लगे थे। उसने चुपके-चुपके लंबे युद्ध की तैयारी प्रारंभ कर दी थी। लारेन्स अवध में अपनी सीमित शक्ति से भी भली भाँति परिचित था। यह असंभव था कि वह क्रांतिकारियों से खुलकर युद्ध करता। उसे तो रेजीडेन्सी में रहकर ही रक्षा करनी थी।

लखनऊ में कोई दुर्ग नहीं था जहाँ अंग्रेजी सेना, असैनिक अंग्रेज अधिकारी और उनके परिवार सुरक्षित रह पाते। लारेन्स के सामने सबसे बड़ी समस्या ऐसे स्थान को चुनना था, जो सामरिक दृष्टि से सबसे अधिक उपयुक्त होना, और जिसकी सरलता से किलेबंदी की जा सकती। उसे तीस

सबसे उपयुक्त स्थान रेजीडेन्सी और मच्छी भवन प्रतीत हुए । ये दोनों स्थान गोमती नदी के दाएँ किनारे पर, एक मील के अंतर पर ऊँचे टीलो पर वसे थे । मच्छी भवन अब नहीं रहा । उसके स्थान पर लखनऊ मेडिकल कालेज बन गया है । मच्छी भवन सामरिक दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण था । उसके विषय में कहा जाता था कि जिसका मच्छी भवन पर अधिकार है, उसका लखनऊ पर भी अधिकार है । रेजीडेन्सी और मच्छी भवन से नगर को जोड़ने वाले दोनों प्रमुख पुलों पर निगरानी रखी जा सकती थी, और शत्रुओं के आवागमन पर नियंत्रण रखा जा सकता था । उसने निश्चय किया कि अंग्रेज रेजीडेन्सी और मच्छी भवन से क्रांतिकारियों का सामना करे, किंतु मुविधा, सुरक्षा और विस्तार की दृष्टि से रेजीडेन्सी अधिक उपयुक्त स्थान था । यहाँ कई भवन थे जिनमें सेना एवं शरणार्थियों को रहने का स्थान मिल सकता था ।

चिनहट की हार के पश्चात् सर हेनरी लारेन्स ने अपने सीमित साधनों का विचार कर मच्छी भवन को खाली करने का निश्चय किया । क्रांतिकारी उसका उपयोग न कर पाएँ इसलिए उस भवन को वारुद से उड़ा दिया गया । उसने अपनी समस्त शक्ति को रेजीडेन्सी में संचित कर लिया था । वह अवध में अंग्रेजी सत्ता का प्रतीक थी और क्रांतिकारियों की आँख की किरकिरी बन गई थी । रेजीडेन्सी में लगे

घेरे से वचने के लिए समस्त सुविधाएँ जुटा ली गई थी । यदि हेनरी लारेन्स ने दूरदर्शिता से काम न किया होता, तो यह संभव था कि घेरे में आए हुए व्यक्तियों को कुछ ही दिन पश्चात भुखमरी के कारण आत्मसमर्पण करना पड़ता ।

रात्रि के अधिकार में कई माह तक अनाज, अस्त्र-शस्त्र, वारुद और लड़ाई का अन्य सामान जमा किया गया था । पशु भी पर्याप्त संख्या में एकत्र किए गए थे, ताकि घेरे में आए हुए व्यक्तियों को मांस की कमी न पड़े । तीन माह के लिए पशुओं के लिए चारा भी इकट्ठा किया गया था । साथ-साथ रेजीडेन्सी की किलेबंदी भी की गई थी । रेजीडेन्सी टीले पर थी, जिसके चारों ओर ढालू भूमि थी । टीले के ऊपरी मैदानी भाग की सीमा पर, जहाँ से ढालू भूमि प्रारंभ होती है, किलेबंदी की गई थी । जगह-जगह गहरी खाइयाँ खोदी गई थी । ऊँची-ऊँची दीवारें उठाई गई थी । पुरानी दीवारों की मरम्मत की गई और बुर्ज बनाए गए । रेजीडेन्सी के उत्तर और दक्षिण में तोपों के लिए जगह बनाई गई । प्रति-रक्षा के लिए मिट्टी की दीवारें बनाई गई । तख्तों पर कीले गाड़ी गई, और नुकीले भाग को ऊपर कर उन्हें ढालू जमीन में ठोक दिया गया, ताकि घुड़सवार सेना आक्रमण न कर सके । ढालू भूमि में गड्ढे किए गए और उनमें नुकीले खूंटें गाड़ दिए गए । इन बचाव के साधनों से आक्रमण होने पर तोपचियों को समय मिल सकता था और वे तोपों को खींच

बल्लिस

कर आक्रमण के स्थान पर ला सकते थे ।

ढालू भूमि पर कुछ खडहर एव झोपडियाँ थी जिनमे क्रांतिकारी शरण ले सकते थे । वे दीवालो पर छेद कर रेजीडेन्सी पर गोलावारी भी कर सकते थे, और यहाँ से रेजीडेन्सी के अंदर सुरगे बना सकते थे । अतः तीन हजार मजदूरों को वारुद और गेंती-फावड़ा देकर इनको साफ करने में लगा दिया गया । कुछ वृक्ष भी निर्दयतापूर्वक काट दिए गए । सब से अधिक खतरा गोमती के किनारे के विस्तृत मैदान से था, जहाँ बड़ी सख्या में क्रांतिकारी आक्रमण के लिए एकत्र हो सकते थे । इसलिए इस तरफ सात फुट ऊँची मिट्टी की दीवाल बना दी गई थी, जिसको मजबूत करने के लिए दीवाल के अंदर लकड़ियाँ गाड़ दी गई थी । झब्वो में मिट्टी भरकर उन्हें पुष्टी के अंदर कर दिया गया था ।

बगाल सेना के अवधी सैनिकों की पलटने लखनऊ में ही थी । वे भी अवध के व्यापक क्षोभ से प्रभावित थी । अतः हेनरी लारेन्स ने सितंबर १८५६ को अधिकारियों को लिखा कि लखनऊ से अवधी सैनिकों की पलटने सिख सैनिकों से बदल दी जाएँ । इसका परिणाम यह हुआ कि सिख सैनिकों ने अंग्रेजों का साथ अतः तक दिया ।

अवध के विभिन्न भागों से अंग्रेज अधिकारी एव उनकी स्त्रियाँ और बच्चे रेजीडेन्सी में आश्रय लेने के लिए आ गए

तैत्तिस्

थे । लखनऊ के ला मार्टिनियर कालेज के पढ़ाई छात्र भी यहाँ आए थे । प्रातःकाल सब स्वस्थ असैनिक व्यक्तियों को कवायद कराई जाने लगी, और उन्हें शस्त्रों के प्रयोग की दीक्षा भी दी गई । ला मार्टिनियर कालेज के विद्यार्थी रेजीडेन्सी के दक्षिण-पूर्वी भाग की चौकी में तैनात किए गए थे । स्थिति विगड़ने पर वे भी युद्ध में हाथ बँटाते थे । उनका काम विशेषतः रेजीडेन्सी के विभिन्न भागों में समाचार लेकर जाना था । युद्धकाल में केवल दो विद्यार्थी घायल हुए थे ।

अंग्रेजों को कुशल नेतृत्व प्राप्त था । देश के विभिन्न भागों में लड़े सैनिक अधिकारी एक दूसरे की गतिविधि और कठिनाइयों से परिचित थे । समय आने पर वे एक दूसरे की सहायता के लिए आ जाते थे ।

क्रांतिकारी दल में आत्मविश्वास अधिक था । जनता अंग्रेजी शासन से छुटकारा पाने के लिए दृढ़ सकल्प थी । अवध के विभिन्न वर्गों के लोगों में विदेशी शासन के प्रति घोर असंतोष व्याप्त था ।

क्रांतिकारियों को एक झंडे और एक नेता के नाम की आवश्यकता थी । अवध का अंतिम नवाब वाजिद अली शाह कलकत्ते में नजरबंद था । अतः सैनिक समिति ने वाजिद अली शाह की बेगम हजरत महल के पुत्र ब्रिजिस कदर को

चौतिस

सिंहासन पर बैठाया। ब्रिजिस कदर की आयु केवल ग्यारह वर्ष की थी। अतः राजकाज हजरत महल की देखरेख में होने लगा। ब्रिजिस कदर ५ जुलाई '५७ को सिंहासनारूढ़



बंगम हजरत महल

हुआ। रेजीडेन्सी का घेरा डालने वाले क्रांतिकारियों ने अंग्रेजों का साथ देने वाले हिंदुस्तानी सिपाहियों को सदेश भेजा—

“हमने अपने राजा को ताज पहना दिया है। फिरगियों का

पेत्तिस

शासन अब समाप्त हो गया है। हम जल्दी ही आपके बेली गार्ड में पहुँचेंगे।”

इस सदेश का क्या प्रभाव हुआ, कहा नहीं जा सकता। यह अवश्य है कि अवध के समस्त असतुष्ट व्यक्ति नवाबी झंडे के नीचे आ गए थे। अवध का असतोष कंपनी के अवधी सैनिकों में तो फैल ही चुका था। सैनिक स्वयं भी सैनिक प्रशासन से असतुष्ट थे। कई प्रचारक असतोष को और अधिक भड़का रहे थे। कंपनी के अवधी सैनिक लगभग डेढ़ लाख थे। इस सख्या की वृद्धि नवाबी सेना के निकाले हुए सैनिकों ने की जो पचास हजार के लगभग थे और जिनकी रोजी नए शासन ने छीन ली थी। समय आने पर अवधी

अपने अगरक्षकों के साथ त्रिजिस कद



सैनिकों ने विद्रोह किया और उनमें से अधिकांश लखनऊ के युद्ध में शामिल होने के लिए चले आए। वे अपने साथ सेना में से अस्त्र-शस्त्र, तोप, गोले और बारूद भी लेते आए।

अंग्रेजों के प्रशिक्षित सैनिक, उनके ही अस्त्र-शस्त्र, गोला-बारूद और उनके द्वारा ही उत्पन्न असतोष जब गहरे असतोष में परिवर्तित हुआ तो भारतीय प्रचारकों ने इसको विद्रोह के रूप में परिणत कर दिया। इसमें मौलवी अहमद उल्लाह शाह का प्रयास उल्लेखनीय है। अवध की जन-जागृति में उनका विशेष हाथ था।

अवध में जमींदारों की सख्या काफी थी। वे स्वयं अपने निजी सैनिक रखते थे और अपनी जमींदारी में पूरा रौब और किसानों पर अधिकार रखते थे। नए बदोबस्त के कारण कई जमींदारों के गाँव छिन गए थे। उनके अधिकारों में कमी आ गई थी। उन्होंने भी क्रांतिकारियों का साथ दिया। उनके पास तीर चलाने वाले पासी थे जो सुरंग लगाने में भी प्रवीण थे।

लखनऊ रेजीडेंसी में अवध की जनक्रांति का केंद्र बन गया था। जगह-जगह से अंग्रेजों के शत्रु खिच-खिच कर यहाँ आने लगे थे। घिराव करने वाले इन लोगों का जमघट आधा लाख तक पहुँच गया था।

सैतिस

अवध की क्रांति को दवाने के लिए कानपुर की तरफ से ही अंग्रेजी सेना आ सकती थी। अतः कानपुर और लखनऊ के मध्य क्रांतिकारियों ने लगभग बारह चौकियाँ स्थापित कर रखी थी।

क्रांतिकारियों की एक बहुत बड़ी कमी थी। वे दूरदर्शी नहीं थे। निकटस्थ क्षेत्र के क्रांतिकारियों से भी उनकी कोई सह-योजना न थी और न ही उनमें किसी प्रकार का आपसी समझौता था। कठिन स्थिति के आने पर उन्होंने एक दूसरे की सहायता भी नहीं की। जिसका परिणाम यह हुआ कि किसी केंद्रीय व्यवस्था के न होने के कारण वे एक-एक करके अलग-अलग पराजित हुए।

रेजीडेन्सी के घेरे में जीवन

चिनहट के युद्ध के पश्चात रेजीडेन्सी चारो ओर से घिर गई थी। वह अवधवासियों की आशा का केंद्र, और घेरे में आए हुए अंग्रेजों के लिए जीवन-मरण का प्रश्न बन गई थी। रेजीडेन्सी के घेरे में लगभग दो हजार व्यक्ति थे जिनमें लगभग ६२७ अंग्रेज सैनिक, ७०० भारतीय सिपाही, ७०० कुली और ६०० औरतें और बच्चे थे। सैनिक एवं बयस्क व्यक्तियों को कठिन सैनिक कार्य-भार सँभालना पड़ता था। कभी-कभी तो उन्हें सोलह घंटे तक लगातार ड्यूटी करनी पड़ती थी। वे बंदूक को बगल में रखकर वहीं पहने ही सो जाया करते थे। स्थिति ही इतनी विकट थी। जरा सी ढील देने पर क्रांतिकारी रेजीडेन्सी पर कब्जा कर लेते और घेराव में आए हुए व्यक्तियों को मौत के घाट उतार देते। बचाव करने वाले व्यक्तियों की संख्या सीमित थी। प्रत्येक व्यक्ति को हर समय ड्यूटी के लिए लैस रहना पड़ता था।

उतालिस

पुरुष विभिन्न चौकियों में सुरक्षा कार्य में सलग्न रहते थे और अपने बाल-बच्चों को यदा कदा ही मिल सकते थे। औरतो और बच्चों को गोलों की मार से सुरक्षित रखने के लिए, उन्हें रेजीडेन्सी के तहखाने में स्थान दे दिया गया था। तहखाने में सूर्य का प्रकाश कठिनता से प्रवेश पा सकता था, और हवा के प्रवाह के लिए भी कोई साधन नहीं था। यहाँ औरतो और बच्चे खचाखच भरे हुए थे। रेजीडेन्सी के क्षेत्र में स्थान के अभाव के कारण कोई और प्रबन्ध भी नहीं किया जा सकता था। यह भी संभव नहीं था कि सक्रामक रोगों के फैलने पर बीमारों को अलग स्थान दिया जा सके।

क्रांतिकारी दिन और रात रेजीडेन्सी पर गोलावारी कर रहे थे। विभिन्न भवनों की दीवारों पर गोलों की मार के बने निशान इतने अधिक और पास-पास थे कि उनकी तुलना चेचक से पीड़ित व्यक्ति के शरीर के दागों से की जा सकती थी। कब, कौन और किस समय गोली का शिकार हो जाए—यह घबराहट सदा बनी रहती थी। प्रतिदिन कई व्यक्ति गोली के शिकार होते थे। डायरी लिखने वालों को प्रतिदिन एक न एक दोस्त की मौत दर्ज करनी पड़ती थी। सात जुलाई को इतिहासकार रीज ने लिखा कि आज तक हमारे बहुत से लोग मारे गए। प्रतिदिन पंद्रह से बीस व्यक्ति तक मारे गए हैं। अधिकांश रायफल और बंदूकों की गोलियों के शिकार हुए हैं। बहुत से व्यक्तियों की मृत्यु एक अफ्रीकी

चालिस

की गोलियों से हुई है। उसका निशाना शायद ही कभी खाली जाता हो। यह अफ्रीकी नवाब वाजिद अली शाह की सेवा में था, और अपने अचूक निशाने के कारण रेजीडेन्सी के निवासियों द्वारा 'अचूक निशाने वाला वौव'। कहा जाने लगा था।

वास्तविकता यह थी कि रेजीडेन्सी के ऊपर मौत हर समय मँडरा रही थी। वह कब किसको उठा ले जाए। अस्पताल में भी सुविधाएँ इतनी कम थी कि घायल व्यक्ति के अच्छे होने की कोई आशा नहीं की जा सकती थी। ब्रिगेड मैस को अस्पताल बना दिया गया था। अस्पताल में विछावन के लिए तबूओ को काट कर कपड़े बनाए गए थे। घायल के आने पर उसकी कमीज को फाड़कर ही पट्टियाँ बना दी जाती थी। क्लोरोफार्म के खतम हो जाने के कारण शल्य चिकित्सा के समय घायल व्यक्ति बुरी तरह चीखता और चिल्लाता था। कुछ व्यक्ति उसके सिर, हाथ, पैर और शरीर को दबाए रखते थे। दवा की कमी के कारण खुले घावों में कीड़े उगने लगते थे। रेजीडेन्सी में जितने घायल व्यक्तियों के अंग काटने पड़े, उनमें से एक भी न जी पाया। उस समय तक कीटाणु नाशक शल्य औषधि का आविष्कार भी नहीं हुआ था।

गोलावारी इतनी भयंकर थी कि कब्रिस्तान में भी मृतक आसानी से दफनाए नहीं जा सकते थे। क्रांतिकारियों की

इन्तालिस

गोलियाँ वहाँ भी सक्रिय रहती थीं । रात्रि के अधिकार में जल्दी-जल्दी, शत्रुओं से बचकर मृतकों की अत्येष्टि क्रिया की जा सकती थी । कब्रों को गहरा नहीं खोदा जा सकता था । छिछली कब्रों में मरे हुए व्यक्ति गाड़ दिए जाते थे । कब्रिस्तान में चारों ओर दुर्गंध ही दुर्गंध फैल गई थी । वहाँ खड़ा रहना कठिन था । स्थिति दिन पर दिन विगड़ती गई ।

हेनरी लारेन्स की मृत्यु के कारण रेजीडेन्सी में घिरे हुए व्यक्तियों का नेता चल बसा था । इससे घिरे हुए व्यक्तियों का मनोबल कम हो गया था । हेनरी लारेन्स मरते समय बुदबुदाया था कि मैंने अपने कर्तव्य-पालन की पूरी चेष्टा की है । रेजीडेन्सी के कब्रिस्तान में उसकी कब्र बनी है जिस पर लिखा है—

यहाँ चिर निद्रा में लेटा है सर हेनरी लारेन्स,

जिसने अपने कर्तव्य-पालन की पूरी चेष्टा की थी ।

रेजीडेन्सी का घेरा अभेद्य हो गया था । इसलिए रेजीडेन्सी के लोगों का वाट्स ससार से कोई सबध नहीं रह गया था । उन्हें उसी सामान और सुविधाओं पर जीवन बसर करना था, जिन्हे सर हेनरी लारेन्स ने एकत्र कर रखा था । ताजी तरकारियों का अभाव विशेष रूप से खटकने लगा था । रेजीडेन्सी में सूखे रोग से इतने अधिक व्यक्ति पीड़ित हुए थे कि उसे लखनऊ रेजीडेन्सी की बीमारी कहा जाने

बयालिस

लगा था। कई वच्चे दूध की कमी के कारण असमय ही काल के मुँह में चले गए थे। जुलाई २२ से वच्चों को जौ का दलिया दिया जाने लगा था। राशन में क्रमशः कटौती की जाने लगी थी। नमक का मिलना भी कठिन हो गया था। वस्त्रों के अभाव में मरे हुए व्यक्तियों के कपड़े पहने जाने लगे थे। तबाकू मिलना कठिन था। विभिन्न प्रकार की पत्तियों का प्रयोग तबाकू के रूप में होने लगा था।

युद्ध और लंबे घेरे की अनिश्चितता से घबरा कर रेजीडेन्सी के नौकर भाग निकले थे। इस काल में अग्रेज नवाबों की भाँति रहने लगे थे। प्रत्येक अधिकारी के पास बीस से लेकर तीस तक नौकर थे। उनकी स्त्रियाँ काम करने की आदी नहीं रही थी। नौकरों के अभाव में औरतों को विशेष कष्ट का सामना करना पड़ा। अब उन्हें सब काम स्वयं ही करना पड़ता था।

क्रांतिकारी घेरे को क्रमशः दृढ़ करते गए। ज्यो-ज्यो दिन बीतते गए क्रांतिकारियों की संख्या भी बढ़ती गई। कुछ स्थानों पर घेरा डालने वाले सिपाही रक्षा पक्ति के भीतर के सैनिकों के इतने समीप आ गए थे कि वे आपस में बातचीत कर लिया करते थे। क्रांतिकारी सैनिक अग्रेजों का साथ देने वाले भारतीयों को 'धर्म त्यागी' कहकर उलाहने देने लगे थे।

भोजन की कमी घेरे में आए हुए व्यक्तियों को दिन पर दिन

तैतालिस

खटकने लगी थी। अन्य सुविधाएँ भी क्रमशः कम होती गई। अन्न जीवन के लिए आवश्यक था, किंतु उन लोगों के लिए जीवन तभी संभव हो सकता था जबकि घेरे से कोई उनको उबारता। घेरे के अंदर सब लोग इस समाचार के लिए लालायित थे कि कानपुर स्थित सेना का अध्यक्ष हेवलाक उनकी सहायता के लिए कब पहुँचे और घेरे की यातना और अनिश्चितता से छुटकारा दिलाए। हेवलाक भी भली भाँति जानता था कि रेजीडेन्सी के वस्त्र लोगों की आँखें उस पर लगी हैं। वह सोचता, क्या वह इस गुरुतर भार को उठा सकेगा? हेवलाक के साधन सीमित थे, और कार्य कठिन था। लेकिन फल कुछ भी हो, उसे तो कर्म करना ही था। उसे बार-बार रेजीडेन्सी से सहायता के लिए प्रार्थना आ रही थी। रेजीडेन्सी के निवासियों का बाह्य ससार से किसी प्रकार का संपर्क नहीं रह गया था। न बाहर की खबर अंदर आ सकती थी और न अंदर की खबर बाहर ही जा सकती थी। समाचार लाने और ले जाने का काम दो भारतीय जासूस अंगद तिवारी और मिसिर कनौजी लाल करते थे। अंगद को प्रति फेरे का पाँच सौ पौंड धन दिया जाता था। उसी के द्वारा हेवलाक से पत्राचार संभव था। अंगद को कानपुर में नाना साहब की गतिविधि पर निगरानी रखने के लिए भेजा गया था। वहाँ से लौटकर उसने समाचार दिया कि हेवलाक गंगा नदी को पार करने की तैयारी में है। वहाँ से चलकर वह रेजीडेन्सी की सहायता

के लिए जरूर आएगा। २२ जुलाई को रेजीडेन्सी के कमांडर इगलिस ने अगद को निम्नलिखित समाचार लेकर हेवलाक के पास भेजा -

“... .. मैं आपको सूचित करता हूँ कि क्रांतिकारी हमारी किलेबंदी की दीवारों तक आ गए हैं, और दिन-रात निरंतर हम पर गोलावारी कर रहे हैं। मैं विश्वास करता हूँ कि आप शीघ्र से शीघ्र हमारी सहायता के लिए आएँगे।”

यह सदेश अग्रेजी में लिखा गया था। उसका कुछ भाग ग्रीक भाषा में था। यदि क्रांतिकारियों के हाथ यह सदेश पड़ भो जाता तो भी वे उसे समझ न सकते थे। अगद इस सदेश को हुक्के की नली में छिपा कर ले गया था। इस पक्ष को पढ़ने से मालूम होता है कि रेजीडेन्सी का कमांडर इगलिस चिंतित था परंतु उसे किसी प्रकार की घबराहट न थी। उसे आशा थी कि निकट भविष्य में मदद मिल जाएगी। तीन दिन पश्चात् २५ जुलाई को अगद हेवलाक का यह सदेश लेकर लौटा था। “हमारी दो-तिहाई सेना गंगा नदी के पार आ गई है। आठ तोपे भी नदी-को पार कर चुकी हैं। हमारे पास उन सबको नष्ट करने के लिए पर्याप्त सेना है, जो हमारा विरोध कर रहे हैं। पाँच या छः दिन में हम तुमसे आ मिलेंगे।”

इस समाचार से रेजीडेन्सी में नई आशा का संचार हुआ।

पैतालिस

वे सोचने लगे कि घेरे के कष्ट से छुटकारा मिलने ही वाला है। कह नहीं सकते कि हेवलाक ने आत्म विश्वास से परिपूर्ण यह पत्र किस आधार पर लिखा था। रेजीडेन्सी के निवासियों की आशा तो मृग-तृष्णा मात्र थी। वह दिवस तो अभी बहुत दूर था। उन्हें कई माह के पश्चात छुटकारा मिला। एक दिन विश्राम करने के पश्चात २७ जुलाई को अगद फिर हेवलाक के लिए एक सदेश एव लखनऊ क्षेत्र का विस्तृत मानचित्र लेकर चला। यह लखनऊ नगर, एव रेजीडेन्सी तक पहुँचने का नक्शा था, जिसका प्रयोग हेवलाक रेजीडेन्सी तक पहुँचने में कर सकता था। ब्रिगेडियर इंगलिस का सदेश इस प्रकार था

“रेजीडेन्सी नगर की सीमा से लगभग डेढ़ मील दूर है। हम आपके आने वाले मार्ग की दाईं एव बाईं तरफ स्थित क्रांतिकारियों की मजबूत चौकियों पर अपने स्थान से पंद्रह सौ गज की दूरी तक गोलाबारी कर सकते हैं। आपके मार्ग के दोनों तरफ मकान हैं और इस सड़क से भारी तोपों को ले जाने में कठिनता होगी।”

तत्पश्चात प्रत्येक रात्रि को आठ बजे रेजीडेन्सी के लोग दक्षिण आकाश की ओर आशा भरी दृष्टि से देखते थे। हेवलाक ने सूचित किया था कि नगर में घुसने से पहली रात्रि को आकाश में राकेट छोड़ कर वह अपने आने और रेजीडेन्सी पर तथाकथित आक्रमण की सूचना देगा। वह

छियालिस

आशा करता था कि अगले दिन रेजीडेन्सी से क्रांतिकारियों की सशक्त चौकियों पर गोलावारी की जाएगी। ताकि क्रांतिकारियों का ध्यान हेवलाक की सेना से हट जाए।

दक्षिण आकाश की तरफ देखते-देखते लोगो की आँखें पथरा गई, लेकिन राकेट न दिखे। रीज ने इन शब्दों में रेजीडेन्सी के निवासियों की निराशा को प्रतिबिम्बित किया है

“सत्ताइस तारीख भी चली गई। कोई सेना न आई। अट्ठाइस भी चली गई और कोई सहायता नहीं मिली। उतिस, तीस और इकतिस तारीख भी निकल गई और हमारी सहायता के लिए आने वाली किसी सेना का कोई पता नहीं। हम आशा लगाए बैठे थे कि हमारे मित्र शीघ्र ही आएँगे और विद्रोहियों को मार भगाएँगे। परंतु यह सब नहीं हुआ। हमारे दिल बैठने लगे। लोगो में उदासी छा गई। जीवन के प्रति वे निराश हो चुके थे, और मारे जाने से पूर्व केवल मारने की उन्हें इच्छा थी। उनका जीवन उनके लिए भार स्वरूप हो गया था।”

अगस्त १५ को हेवलाक का लिखा हुआ सदेश इंगलिस को मिला। यह ग्यारह दिन पूर्व ही लिखा जा चुका था। हेवलाक ने लिखा था :

“हम कल सुबह लखनऊ के लिए रवाना होंगे। हमारे सैनिकों की संख्या बढ़ गई है। तुम तक पहुँचने में हमें

सैतालिस

अधिक से अधिक चार दिन लगेगे। तुम्हे हमारी हर प्रकार से सहायता करनी चाहिए। यदि हम रेजीडेन्सी में घुस न सके, तो तुम्हे दुश्मनों के घेरे को काट कर हम से आ मिलना चाहिए।”

इस सदेश को पढ़कर ब्रिगेडियर इगलिस को ऐसा प्रतीत हुआ कि हेवलाक उसकी कठिन परिस्थिति को समझ नहीं रहा है। उसने हेवलाक को लिखा

“यह असंभव है कि मैं अपनी कमजोर और क्षत-विक्षत सेना के सहारे रेजीडेन्सी की किलेबंदी को छोड़ सकूँ। आपको यह ध्यान में रखना चाहिए कि मैं किस कठिनाई में पड़ा हूँ। मेरे पास १२० के ऊपर वीमार और घायल हैं, २२० स्त्रियाँ तथा २३० बच्चे हैं। किसी भी प्रकार की गाड़ी नहीं है। तीस तोपों को और तेईस लाख के खजाने को छोड़ना पड़ेगा। फिलहाल सेना का राशन आधा कर दिया जाएगा। इस कटौती के कारण हमारी भोजन सामग्री दस सितंबर तक चल जाएगी। यदि आप इस सेना को बचाना चाहते हैं तो बिना समय नष्ट किए, आगे बढ़िए। शत्रु प्रति-रक्षा पक्ति से कुछ ही गज की दूरी पर है और प्रतिदिन आक्रमण करता रहता है। शत्रु की सुरगों ने हमारी चौकी को पहले से ही असुरक्षित कर दिया है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि आगे भी वे सुरगें लगाते रहेंगे।

“करीब पच्चीस दिन पूर्व हमारी देशी सेना को यह विश्वास

अडतालिस

दिलाया गया था कि आप जल्दी पहुँच रहे हैं। यह सेना अब विश्वास खो रही है। यदि ये चले जाएँगे तो हम नहीं जानते कि रक्षा के लिए आदमी कहाँ से आएँगे।”

रेजीडेन्सी को घेरे में आए हुए लगभग पैतालिस दिन हो गए थे। एक माह से उनके पास कई आश्वासन आ गए थे कि कुछ ही दिनों में छुटकारा मिल जाएगा। लेकिन यह मुक्ति दिवस मृग-तृष्णा की भाँति दूर ही हटता गया। आशा • निराशा • और आशा सतत रेजीडेन्सी के निवासियों को वारी-वारी से हर्षित और चिंतित करते रहे। कभी जीवन की आशा बँध जाती थी और कभी मौत की झलक दीखने लगती थी। हेवलाक के आने में जितनी ही अधिक देर हो रही थी, उतनी ही घेरे में आए हुए व्यक्तियों की कठिनाइयाँ भी बढ़ती जा रही थी। यह उनके लिए मृत्यु एवं जीवन का प्रश्न था।

बारह दिन के पश्चात अर्ध रात्रि में, २८ अगस्त को अगद एक सदेश हेवलाक से लाया। उसमें हेवलाक ने उन्हें राजपूतों की भाँति केसरिया वाना पहनकर अंतिम समय तक लडते हुए मर मिटने की सलाह दी थी—

“मुझे तुम्हारा सोलह अगस्त का पत्र मिला है। मैं तुम्हें यही राय दे सकता हूँ कि क्रांतिकारियों से समझौता मत करो। यदि आवश्यकता हो तो तलवार लेकर क्रांतिकारियों का सामना करते हुए जीवन बलिदान कर दो। वीस या

पच्चीस दिन में मुझे और सैनिक मिल जाएँगे, और मैं यथा-शक्ति लखनऊ पहुँचने का प्रयत्न करूँगा ।”

इस पत्र को पाकर रेजीडेन्सी में और निराशा छा गई । लोग सोचने लगे थे कि सहायता कभी न आएगी । जब घेरे-बंदी को पूरे साठ दिन हो गए थे, तो हेवलाक, जिसे वे अपना तारनहार समझ रहे थे, उन्हें पच्चीस दिवस की और यातना भोगने के लिए कह रहा था । कौन कह सकता था कि पच्चीस दिन में सहायता मिल ही जाएगी । क्या इससे पूर्व भी सहायता के कई संदेश न आ चुके थे ? लखनऊ के घेरे में आए हुए व्यक्तियों को विश्वास नहीं हो पा रहा था, कि लखनऊ और कानपुर की ५३ मील की दूरी को पार करने के लिए हेवलाक को पूरे नौ सप्ताह चाहिए ।

रेजीडेन्सी में राशन आधा कर दिया गया था और इधर क्रांतिकारी दिन पर दिन सशक्त होते जा रहे थे ।

हेवलाक की भी स्वयं अपनी कठिनाइयाँ थी । उसके पास केवल पंद्रह सौ सैनिक थे और दस छोटी तोपें थी । कानपुर और लखनऊ के बीच क्रांतिकारियों की लगभग बारह चौकियाँ थी और लखनऊ का युद्ध भी लड़ना था । हेवलाक ने लखनऊ से आए मानचित्र का अध्ययन किया । वह हाथ मल कर रह गया । उसने कहा—“संभवतः दस हजार व्यक्ति लखनऊ ले सकते हैं, इससे कम नहीं ।”

पचास

लखनऊ रेजीडेन्सी की घेरेबदी को ८८ दिन हो गए थे । ब्रिगेडियर इगलिस हतोत्साहित हो गया था । उसने क्रांतिकारियों से समझौता करने का प्रयत्न किया, लेकिन क्रांतिकारी समझौते के लिए तैयार नहीं हुए । सैनिकों की संख्या घट कर १७२० से ६७६ हो गई थी । क्या सहायता कभी आ भी पाएगी ? इससे पूर्व उन्हें निम्नलिखित आश्वासन मिले थे—

जुलाई २५, पाँच या छ दिन में हम तुम से आ मिलेंगे ।

अगस्त १५, अधिक से अधिक हमें तुम तक पहुँचने में चार दिन लगेंगे ।

अगस्त २८, बीस या पच्चीस दिन में मुझे और सैनिक मिल जाएँगे, और मैं यथाशक्ति लखनऊ पहुँचने का प्रयत्न करूँगा ।

२५ सितंबर को हेवलाक का कोई आशावादी संदेश तो नहीं मिला, किंतु तोप के गोलों की आवाज ने रेजीडेन्सी के निवासियों में आशा का संचार किया । उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ कि तोपें कह रही हैं कि हम तुम्हारी मदद के लिए आ रहे हैं ।

रेजीडेन्सी का मुक्ति प्रयास

रेजीडेन्सी के घेरे मे आए हुए व्यक्तियो से हेवलाक को कई सदेश मिल चुके थे कि 'जान बचाओ' और 'भूखे मरने से बचाओ'। हेवलाक कानपुर क्षेत्र का कमांडर था। कानपुर लखनऊ से सबसे निकटस्थ सैनिक केंद्र था। दोनों नगरों के बीच केवल ५३ मील की दूरी थी। हेवलाक भी अपनी जिम्मेदारी को भली भाँति समझता था। उसे रेजीडेन्सी की सहायता के लिए पहुँचना ही था। रेजीडेन्सी के नेता सर हेनरी लारेन्स की मृत्यु के कारण रेजीडेन्सी के निवासी और अधिक असहाय हो गए थे। लारेन्स की मृत्यु से हेवलाक का सकल्प और अधिक दृढ़ हुआ कि उसे रेजीडेन्सी के घेरे मे आए हुए व्यक्तियो को हर हालत मे बचाना ही चाहिए। वह रेजीडेन्सी के उद्धारक होने का श्रेय लेना चाहता था।

हेवलाक भली भाँति जानता था कि यदि वह समय पर रेजीडेन्सी की मदद के लिए नहीं आ पाया, तो वहाँ के

निवासियों के भाग्य का निपटारा दो ही प्रकार से होगा ।
या तो वे क्रांतिकारियों द्वारा मौत के घाट उतार दिए
जाएँगे, या वे भूखे मर जाएँगे ।

लखनऊ रेजीडेन्सी सामरिक एक राजनैतिक दृष्टि में
क्रांतिकारियों और अंग्रेजों के लिए समान महत्व रखती थी ।
वह अवध की क्रांति का केंद्र-बिंदु थी । अंग्रेजों द्वारा
रेजीडेन्सी के घेरे का अंत कर दिए जाने पर क्रांतिकारियों
के अवध के मोर्चे का अंत हो जाता, और अंग्रेजों का प्रभाव
पुनः स्थापित हो जाता । दोनों दलों के लिए रेजीडेन्सी पर
अधिकार महत्वपूर्ण था ।

कई अंग्रेज सैनिकों ने वाद में सर हेनरी लारेन्स की
आलोचना की थी कि उसे अवध छोड़ देना चाहिए था ।
रेजीडेन्सी को खाली कर उसे अपनी सेना सहित कानपुर आ
जाना चाहिए था । इससे दो लाभ होते । कानपुर और
लखनऊ की सम्मिलित सेना कानपुर-कालपी-झाँसी क्षेत्र
में अधिक सक्रिय होती । रेजीडेन्सी के घेरे में आए हुए
व्यक्ति भी घेरे की यातना से बच जाते । इस विचार के
विरुद्ध यही कहा जा सकता है कि लखनऊ को छोड़ देने
पर अंग्रेजी सत्ता को अवध में भारी धक्का लगता ।

वे क्रांतिकारियों की दृष्टि में भगोड़े साबित होते ।
क्रांतिकारियों का हौसला और अधिक बढ़ता । दिल्ली
अंग्रेजों के हाथ से पहले ही निकल चुकी थी । लखनऊ छोड़

तिरपन

देने पर, अवध के ऐसे व्यक्ति जो निश्चय नहीं कर पा रहे थे कि किस पक्ष का साथ दे, अव क्रांतिकारियों के पक्ष में आ जाते। लखनऊ न छोड़ने का निश्चय सामरिक दृष्टि से उचित ही था।

हेवलाक लखनऊ के मुक्ति प्रयास की कठिनता भली भाँति समझता था। संपूर्ण अवधवासी अंग्रेजों के विरुद्ध थे। स्थानीय जनता से उसे किसी भी प्रकार की सहायता नहीं मिल सकती थी। कानपुर और लखनऊ की दूरी अधिक तो नहीं थी, लेकिन इन दो नगरों के मध्य क्रांतिकारियों की सशक्त चौकियाँ थी। हेवलाक के पास पर्याप्त सेना भी नहीं थी, और न उसे भावी युद्ध में आहत सैनिकों की पूर्ति की ही आशा थी। इन कठिनाइयों के होते हुए भी उसे लखनऊ की ओर बढ़ना ही था। वह भली भाँति जानता था कि लखनऊ रेजीडेन्सी के घेरे में आए हुए व्यक्ति उसे अपना बचाने वाला समझ रहे हैं। उनकी आँखें उस पर लगी हैं। वह उनकी आशाओं पर तुषारापात नहीं कर सकता था।

कानपुर गंगा नदी के किनारे बसा है। लखनऊ की ओर प्रस्थान करने के लिए उसे सर्वप्रथम गंगा नदी को पार करना था। उसने नावों का पुल बनाना प्रारंभ किया। सामरिक दृष्टि से इस पुल का महत्व था। इसके द्वारा कानपुर से लखनऊ की ओर यातायात संभव हुआ। पुल के बनने में कई दिन लगे। एक महत्वपूर्ण प्रश्न उठता है कि

चव्वन

क्रांतिकारी इस समय क्या कर रहे थे ? न तो कानपुर के क्रांतिकारियों ने इस पुल के बनने में बाधा दी, और न लखनऊ के क्रांतिकारियों ने इसके बनने में रुकावट डाली । क्या लखनऊ के क्रांतिकारी यह नहीं समझते थे कि पुल के बनने से अंग्रेजों को अनवरत सहायता मिल सकेगी, और अवध में दुर्घटना होने पर वे इस पुल के द्वारा जान बचा कर भाग सकते थे ? स्पष्ट है कि लखनऊ और कानपुर के क्रांतिकारियों में किसी भी प्रकार की पारस्परिक सुनियोजित योजना नहीं थी ।

क्रांतिकारियों को हर दशा में इस पुल को बनने नहीं देना चाहिए था । वास्तव में गंगा के पुल का युद्ध अवध के युद्ध का प्रथम मोर्चा हो सकता था ।

२५ जुलाई को हेवलाक ने पंद्रह सौ सैनिकों के साथ गंगा को पार किया । कानपुर से पाँच मील की दूरी पर मगरवारा में उसने एक अग्रिम चौकी स्थापित की । मगरवारा एक ऊँचे स्थान पर बसा था । इस चौकी से गंगा में आने-जाने वाली नावों पर नियंत्रण रखा जा सकता था, और पुल से आने-जाने वाली फौजों को भी सरक्षण दिया जा सकता था । शत्रु की सेना को पुल पार करने से भी रोका जा सकता था । मगरवारा में हेवलाक स्थिति के विगड़ने पर आश्रय लेने के लिए आ सकता था, और अपने घायल

एव बीमार सिपाहियों को भी इलाज के लिए भेज सकता था ।

मगरवारा में वह तीन दिन रसद और यातायात के साधनों के लिए रुका । २८ जुलाई को उसने प्रधान सेनापति को एक पत्र लिखा, जिसमें उसने अपनी कठिनाइयों का वर्णन किया, और अपनी सीमित शक्ति के कारण कुछ कर सकने में अपनी असमर्थता ही दिखलाई । उसके पत्र का आशय इस प्रकार था—

“यदि यह मान भी लिया जाए कि लखनऊ रेजीडेन्सी के सैनिक घेरा काटकर मुझसे आ मिलते हैं, तब भी मेरे गंगा पार कर कानपुर वापस लौटने के प्रयास में भारी क्षति की संभावना है । मेरी लौटती हुई सेना पर क्रांतिकारी पीछे से वार करेंगे । उसी प्रकार मेरा रेजीडेन्सी के घिराव में आए हुए व्यक्तियों को मुक्ति देना भी कठिन है । क्रांतिकारी रेजीडेन्सी के घेरे को क्रमशः दृढ़ करते जा रहे हैं । ज्यों-ज्यों समय बीतता जा रहा है, क्रांतिकारियों की संख्या भी क्रमशः बढ़ती जा रही है ।

“लखनऊ की ओर बढ़ने में कठिनाइयाँ अधिक हैं । मार्ग में सई नदी के ऊपर ‘वनी’ नामक स्थान में पुल है । नदी की प्राकृतिक रुकावट का लाभ उठाकर क्रांतिकारियों ने यहाँ प्रबल मोर्चा बना रखा है । उन्होंने पुल को बारूद से

छप्पन

उड़ाने का प्रबन्ध भी कर रखा है। यह भी संभव है कि 'वनी' पर सीधा आक्रमण करने में मुझे एक-तिहाई सेना से हाथ धोना पड़े।

“आज सुबह मुझे रेजीडेन्सी के इंजीनियर से लखनऊ क्षेत्र का मानचित्र मिला। उसमें उन्होंने मुझे रेजीडेन्सी तक पहुँचने का मार्ग दर्शाया है, और अन्य लाभदायक सूचना भी दी है। जासूसों के द्वारा लाई गई सूचना के आधार पर मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि रेजीडेन्सी के घेराव में आए हुए व्यक्तियों को किसी प्रकार की सहायता पहुँचा सकना अति कठिन है। इस प्रयास में हमें हानि भी अधिक उठानी पड़ेगी। लेकिन मैं हर प्रकार का खतरा उठा कर भी लखनऊ पहुँचने का प्रयास करूँगा। हैजा के कारण हमारी सेना की संख्या दिन प्रति दिन कम होती जा रही है। मेरी सेना में पंद्रह सौ सैनिक हैं, जिनमें बारह सौ अंग्रेज हैं, और दस तोपे हैं।”

प्रधान सेनापति को लिखे हुए इस पत्र के अनुसार हेबलाक की स्थिति निराशाजनक प्रतीत होती है। लेकिन वह निष्क्रिय भी नहीं रह सकता था। अतः २८ जुलाई को उसने उन्नाव की ओर प्रस्थान किया। उन्नाव में उसका मार्ग क्रांतिकारियों ने रोक रखा था। क्रांतिकारियों की सेना का अगला भाग वगीचे की एक चहार दिवारी के पीछे सुरक्षित था। उसका दायीं भाग दलदल के पीछे फैला

हुआ था, जिस पर सीधा आक्रमण नहीं किया जा सकता था। क्रांतिकारियों की बाकी सेना मकानों के पीछे और मकानों के अंदर इकट्ठी थी, जिनकी दीवारों पर गोली चलाने के लिए छेद कर दिए गए थे। युद्ध के फलस्वरूप हेवलाक ने क्रांतिकारियों की तोपों पर कब्जा कर लिया।

इस समय उसे समाचार मिला कि लखनऊ से क्रांतिकारियों की सहायता के लिए तोपखाने के साथ एक सेना आ रही है और वह उन्नाव पहुँचने ही वाली है। यह महत्वपूर्ण था कि नवागतुक सेना का नगर में घुसने के पूर्व ही सामना कर लिया जाता। अतः हेवलाक तेजी से आगे बढ़ा और नगर को पार कर उसने अपना मोर्चा ऐसे स्थान पर लगाया जो चारों ओर दलदल से घिरा था। इस स्थान से, लखनऊ से आने वाली सड़क पर गोलाबारी की जा सकती थी। क्रांतिकारी जाल में फँस गए। अकस्मात् अंग्रेजों की तोप और गोलियों की मार उन पर पड़ी। मार से बचने के लिए क्रांतिकारी सेना दाएँ और बाएँ फैली, किंतु उनकी तोपें दलदल में फँस गईं। तीन सौ क्रांतिकारी मारे गए और पंद्रह तोपें अंग्रेजों के हाथ लगीं। हेवलाक ने उनका पीछा कुछ दूरी तक किया, और तीन घंटे विश्राम करने के बाद, वह ६ मील आगे वशीरतगज पहुँचा।

वशीरतगज छोटा कस्बा था। उसके चारों ओर चहार दिवारी थी। क्रांतिकारी मकानों और चहार दिवारी की

बट्ठावन

आड में मोर्चों पर डटे थे। पीछे की तरफ से उन्हें पानों के एक लगभग सात फुट गहरे तालाब में सरक्षण मिलना था, जिसके ऊपर एक पुलिया से सड़क जाती थी। हेवलाक ने सामने से आक्रमण नहीं किया, जैसा कि क्रांतिकारी सोचते होंगे। उसने नगर के दाएँ बाएँ ओर से आक्रमण किया। क्रांतिकारी विस्मित रह गए। कुछ देर सामना करने के बाद वे रणक्षेत्र से भाग गए।

इन दो युद्धों के फलस्वरूप जिनमें हेवलाक को मफलता मिली थी, उसके अट्ठासी सैनिक मर चुके थे। अब उसकी सेना में केवल आठ सौ पचास सैनिक बचे थे। जितनी भी गाड़ियाँ उपलब्ध थीं, वे मर घायलों में भरी थीं। वह केवल लखनऊ की एक-तिहाई दूरी को पार कर सका था। गुप्तचरों द्वारा सूचना मिली थी कि लखनऊ से आगे मार्ग में क्रांतिकारी कई स्थानों पर उसका तापना करने के लिए इकट्ठे हैं। हेवलाक ने निश्चय किया कि उसे मगरवारा लौट जाना चाहिए। वहाँ घायलों की सृचारु रूप से चिकित्सा हो सकेगी, और उसके सैनिक आगमन कर सकेंगे। पुनः अधिक सैनिक प्राप्त होने पर ही उसे लखनऊ की ओर बढ़ना चाहिए, इस निर्णय से कई सैनिकों को निराशा हुई। वे सोचते थे कि सीमित साधनों के होते हुए भी, उनका लखनऊ पहुँचना संभव था।

मगरवारा पहुँचने पर हेवलाक ने ३१ जुलाई को कानपुर के

कमांडर नील को एक पत्र लिखा । (नील आगे चलकर 'कानपुर का कसाई' के नाम से प्रसिद्ध हुआ । उसने क्रांतिकारियों एवं जनसाधारण पर अकथनीय अत्याचार किए) । पत्र में लिखा था कि मैं लखनऊ की ओर बढ़ सकता हूँ, यदि मुझे कुछ तोपे और एक हजार सैनिक मिले ।

नील ने हेवलाक के वापस लौटने को अच्छा नहीं समझा । उसका विचार था कि इससे ब्रिटिश प्रतिष्ठा को धक्का लगा है । अब तक भारतीय ब्रिटिश सैन्य शक्ति से प्रभावित थे । हेवलाक के लौटने से वे यही समझेंगे कि अब अंग्रेजों की शक्ति क्षीण हो गई है । नील ने हेवलाक को एक अभद्र पत्र भेजा—

“मुझे दुःख है कि आप पीछे हटते हैं, इससे हमारी प्रतिष्ठा पर बुरा प्रभाव पड़ा है । कानपुर में अनेक खबरे फैली हुई हैं, जिनमें एक यह है कि आप जितनी तोपें ले गए थे, उनको खो चुके हैं । आप अधिक तोपों को लेने के लिए पीछे हटते हैं । सबका यह विश्वास है कि आप पराजित हुए हैं । यह एक दुर्भाग्यपूर्ण बात है कि शत्रुओं से छीनी हुई तोपें आप अपने साथ नहीं लाए । आपके पीछे हटने का निश्चय हमारे उद्देश्य के लिए बहुत हानिकार हुआ है । आपको फिर आगे बढ़ना चाहिए, और तब तक नहीं रुकना चाहिए, जब तक कि आप रेजीडेन्सी के घेरे में आए हुए व्यक्तियों को बचा न लें ।”

साठ

अपने अधीनस्थ अधिकारी की कटु आलोचना से हेवलाक तिलमिला उठा। उसने नील को मुहत्तोड जवाब दिया कि, “तुम्हे यह भली भाँति समझ लेना चाहिए कि यदि यह राजकाज मे बाधक नही होता तो मै तुम्हे गिरफ्तार करवा देता। तुम्हारा इस प्रकार का पत्र-व्यवहार अशोभनीय है।”

हेवलाक को केवल २५७ सैनिको की और सहायता मिल सकी थी। उन्होंने केवल मरे हुए सैनिको के रिक्त स्थानो की पूर्ति की। उससे सैनिक सख्या मे कोई वृद्धि न हो सकी, और न स्थिति मे ही कोई सुधार हुआ। फिर भी उसने दूसरी बार लखनऊ की ओर प्रस्थान करने का निश्चय किया। वशीरत-गज मे क्रांतिकारी फिर आ गए थे, और उन्होंने हेवलाक से युद्ध करने की सब तैयारियाँ कर रखी थी। हेवलाक ने क्रांतिकारियो को हराया, लेकिन वह उनका पीछा न कर पाया। उसके पास घुडसवार सेना बहुत कम थी। क्रांतिकारी अपनी तोपो को भी साथ ले जाने मे सफल हुए। हेवलाक को स्पष्टतया आभास हुआ कि वह लखनऊ को सहायता पहुँचाने के लिए शक्तिशाली नही है।

इस समय उसे ग्वालियर मेना के विद्रोह का भी समाचार मिला, जिसके कारण कालपी और कानपुर मे गभीर स्थिति पैदा होने की सभावना बढ गई थी। उसके सम्मुख दो समस्याएँ थी - वह लखनऊ की ओर बढे, या गंगा पार कर कालपी तथा कानपुर क्षेत्र की विगडती हुई स्थिति का सामना

करने के लिए तत्पर रहे। हेवलाक ने सोचा कि यदि वह लखनऊ की ओर बढ़ता है तो उसे एक-तिहाई सेना से हाथ धोना पड़ेगा। लखनऊ के युद्ध के लिए उसके पास केवल सात सौ व्यक्ति बचेगे। प्रतिदिन उसकी सेना में हैजा से मृत्यु हो रही थी। यह असंभव था कि सात सौ सैनिकों की सहायता में वह रेजीडेन्सी में घिरे हुए व्यक्तियों की किसी भी प्रकार की मदद कर पाता। यह भी संभव था कि इस प्रयास में उसकी पूरी मेहनत ही नष्ट हो जाती। उसने निश्चय किया कि वह मगरबारा लौट जाएगा।

उसे रेजीडेन्सी में 'जान बचाओ' संदेश मिल रहे थे। लेकिन वह कर ही क्या सकता था। अब तो वह इस स्थिति में भी न था कि उनको आशा का संदेश भी दे पाता। कटु वास्तविकता का विचार कर उसने इंगलिस को राय दी कि जो कुछ बन पड़े स्वयं ही करो। कहीं से भी किसी प्रकार की मदद की आशा छोड़ दो। यदि संभव हो तो घेरे को काटकर कानपुर चले आओ। यह एक ऐसी राय थी जिसका पालन करना इंगलिस के लिए असंभव था। लेकिन कानपुर में क्रांतिकारियों की बढ़ती हुई शक्ति के कारण हेवलाक को गंगा पार कर अवध को छोड़ना पड़ा।

हेवलाक अवध को छोड़ कर कानपुर नहीं जाना चाहता था। उसका विश्वास था कि इसका दुष्परिणाम होगा। सर्वसाधारण इसका यही अर्थ लगाएँगे कि अंग्रेज पीछे हट रहे हैं। क्रांतिकारियों के पक्ष की वृद्धि होगी।

बासठ

हेवलाक का अवध छोड़ना

कानपुर में क्रांतिकारियों का नेता नाना साहब था। वह पदच्युत पेशवा का दत्तक पुत्र था। जब अंग्रेजों ने उसकी पेंशन बढ़ कर दी तो वह अंग्रेजों का शत्रु बन गया। सन '५७ की क्रांति में वह विठ्ठल-कानपुर क्षेत्र में सक्रिय रहा।

लखनऊ की अपेक्षा कानपुर में क्रांतिकारियों को अधिक सफलता मिली। मगरवारा में हेवलाक को समाचार मिला कि विठ्ठल में क्रांतिकारी सक्रिय हो रहे हैं। यह अंग्रेजों के लिए नया खतरा पैदा हो गया था। यदि कानपुर क्षेत्र में क्रांतिकारी और अधिक सशक्त बनने दिए जाते तो हेवलाक को पीछे की ओर से भी आक्रमण की आशका बनी रहती, अतः उसने विठ्ठल की ओर प्रस्थान करने का निश्चय किया।

लखनऊ की स्थिति तो शोचनीय थी ही। इस प्रकार

तिरसठ

हेवलाक लखनऊ और कानपुर के क्रांतिकारियों के मध्य चक्की के दो पाटो के बीच आए हुए अनाज की तरह पिस सकता था, यदि दोनों नगरों के क्रांतिकारियों ने मिल कर उस पर दोनों तरफ से साथ-साथ हमला कर दिया होता ।

कानपुर का सामरिक दृष्टि से अपना महत्व था । यदि कानपुर क्रांतिकारियों के अधिकार में पूर्णतया आ जाता, तो इलाहाबाद से आने-जाने के साधनों पर रोक लग जाती । उत्तर भारत के अंग्रेजों को सहायता कलकत्ता से होते हुए गंगा के मार्ग से ही मिल सकती थी । अतः हेवलाक को

हाथी पर सवार नाना साहब



कानपुर में अंग्रेजी सत्ता को बनाए रखना आवश्यक प्रतीत हुआ ।

कानपुर का कमांडर नील अपनी बची-खुची सेना के साथ एक चौकी बना कर रक्षात्मक युद्ध लड़ रहा था । उसकी स्थिति स्वयं निर्बल थी । नील ने हेवलाक को लिखा कि, “विठूर में एक हजार क्रांतिकारी पाँच तोपों के साथ आ डटे हैं । यदि मुझे सहायता नहीं मिल पाती है तो मैं इस सिलसिले में कुछ नहीं कर सकता हूँ । मैं केवल अपनी और चौकी किले-बंदी की रक्षा कर सकता हूँ ।”

हेवलाक ने निश्चय किया कि सामरिक दृष्टि से उसका विठूर जाना उचित ही होगा । उसने अपना कुछ सामान गंगा पार भेज भी दिया था, जब उसे समाचार मिला कि वशीरतगज में चार हजार क्रांतिकारी फिर एकत्र हो गए हैं । नदी पार करते समय उसे डर बना रहता कि कहीं उस पर पीछे से आक्रमण न हो जाए । अतः उसने तय किया कि पहले वशीरतगज में एकत्र क्रांतिकारियों से निपटा जाए ।

भारी वर्षा हो रही थी । वह वशीरतगज की ओर बढ़ा । वशीरतगज में तीसरी बार उसने क्रांतिकारियों से युद्ध किया । वे पराजित हुए, और रणक्षेत्र छोड़ कर भाग गए ।

मगरवारा लौट कर हेवलाक ने गंगा नदी को पार किया ।

तत्पश्चात् पुल को तोड़ कर उसने विठूर की ओर प्रस्थान किया । उसने पुल को तोड़ना आवश्यक समझा । पुल के बने रहने पर उसे अवध के क्रांतिकारियों से डर बना रहता । वे उस पर पीछे से आक्रमण भी कर सकते थे और कानपुर के क्रांतिकारियों की सहायता के लिए भी आ सकते थे ।

विठूर में क्रांतिकारियों ने विस्तृत मैदान में जहाँ गन्ने की खेती हो रही थी, युद्ध के लिए व्यूह रचना की थी । उन्होंने अपनी सेना और तोपों को पौधों के पीछे छिपा रखा था । हेवलाक अपने सशक्त तोपखाने को लेकर युद्ध के लिए बढ़ा । दोनों तरफ से गोलावारी हुई । युद्ध के परिणामस्वरूप क्रांतिकारियों की पैदल सेना तो टिक न सकी, किंतु छिपी हुई तोपों से अग्रेजों पर भीषण अग्नि वर्षा हुई । हेवलाक ने स्वयं इस तथ्य को स्वीकार किया कि क्रांतिकारी उसके सशक्त तोपखाने के विरुद्ध वीरता से लड़े । विजय अग्रेजों की हुई । हेवलाक कानपुर लौट आया ।

लखनऊ की विगडती हुई स्थिति के कारण उसे चिंता हो रही थी । उसका लखनऊ का मुक्तिदाता बनने का स्वप्न अपूर्ण ही रह गया था । अब तक वह क्रांतिकारियों पर छुट-पुट विजय ही प्राप्त कर सका था, लेकिन क्रांतिकारियों का उत्साह किसी प्रकार कम नहीं हुआ था । वे पुनः युद्ध के लिए एकत्र हो जाते थे ।

छियासठ

छ सप्ताह पश्चात् उसे कलकत्ता से सहायता मिली । कलकत्ता से उठरम इतनी सेना लेकर आया कि उनकी सम्मिलित सेना मिलकर लखनऊ के घेरे में आए हुए व्यक्तियों की सहायता के लिए बढ सकती थी । उधर अवध की क्रांति ने हेवलाक के अवध छोडने पर जन क्रांति का रूप ले लिया था । अवध के विभिन्न वर्ग के लोगो ने अंग्रेजो के विरुद्ध हथियार उठा लिए थे । लखनऊ रेजीडेन्सी के घेरे को सशक्त करने के लिए, अवध से विभिन्न भागों से सैनिक खिंचे आ रहे थे ।

मददगार स्वयं घेरे के अंदर

बिठूर की विजय के पश्चात जब हेवलाक १७ अगस्त को कानपुर पहुँचा तो उसे कलकत्ता गजट की एक प्रति मिली। उसे ज्ञात हुआ कि उसके पद को सर जेम्स उटरम को दे दिया गया है। उसे अब उटरम के अधीन रहकर कार्य करना होगा, इस समाचार से उसे निराशा हुई। उसने सीमित साधनों के होते हुए भी रेजीडेन्सी के घेरे में आए हुए व्यक्तियों को वचाने का गुरुतर भार उठाने का भरसक प्रयत्न किया था। वह असंभव को तो संभव नहीं कर सकता था ! और उसे यह पुरस्कार मिला कि वह पदच्युत कर दिया गया। अब नेता न रहकर वह अधीनस्थ हो कर कार्य करेगा। कोई अन्य सैनिक होता तो इस स्थिति में उसकी आत्मा विद्रोह करती, किंतु हेवलाक एक अनुभवी और सुलझा व्यक्ति था। अनुशासन का पालन करना सैनिक के लिए सर्वोपरि था।

वह लखनऊ लेने के लिए तैयारी करता रहा। हैजा के कारण उसके सैनिक मरते जा रहे थे। उसकी सेना में केवल सात सौ सैनिक रह गए थे। हेवलाक उत्कठापूर्वक उस दिन की प्रतीक्षा कर रहा था, जब सर जेम्स उटरम अपने सैन्य दल के साथ आएगा, और उनकी सम्मिलित सेना लखनऊ की ओर कूच करेगी।

उटरम के आने पर सम्मिलित सेना में ३,१७० सैनिक हो गए थे, जिनमें २,३८८ अंग्रेज सैनिक थे। घुड़सवारों की संख्या केवल १६८ थी।

उटरम रेजीडेन्सी लेने वाली सेना का अधिनायक बना कर भेजा गया था। उसने निश्चय किया कि हेवलाक ही इस सेना का संचालन करेगा। वह एक असैनिक स्वयंसेवक की भाँति उसके साथ रहेगा। उसका विचार था कि रेजीडेन्सी को लेने का श्रेय हेवलाक को ही मिलना चाहिए, जो सीमित साधनों के होते हुए भी रेजीडेन्सी तक पहुँचने का सतत प्रयत्न करता रहा।

कानपुर से हेवलाक और उटरम की सम्मिलित सेना ने लखनऊ की ओर प्रस्थान किया। पहले कहा जा चुका है कि विठ्ठर जाते समय हेवलाक ने गंगा के पुल को तोड़ दिया था। यह निश्चय किया गया कि पुराने पुल के स्थान पर फिर नावों का पुल बनाया जाए।

उन्हतर

हेवलाक के हटने पर क्रांतिकारियों ने मगरवारा पर अधिकार कर लिया था। वहाँ आठ तोपों के साथ आठ हजार क्रांतिकारी जमे हुए थे। पुल बनने लगा, और बनता गया, लेकिन क्रांतिकारियों ने उसके बनने में किसी प्रकार की बाधा नहीं दी। सामरिक दृष्टि से क्रांतिकारियों के लिए यह अति महत्वपूर्ण था कि गंगा में पुल न बनने पाता। पुल बनने से हेवलाक और उटरम को निरंतर सहायता मिल सकती थी। मगरवारा में क्रांतिकारियों की संख्या इतनी काफी थी कि वे पुल के बनने में रुकावट डाल सकते थे। उन्हें रुकावट डालनी चाहिए थी, किंतु वे केवल दर्शक मात्र ही रहे। अंग्रेजी सेना के पुल पार करते समय भी उन्होंने किसी प्रकार की बाधा नहीं डाली। क्रांतिकारियों ने एक अच्छे अवसर को हाथ से निकाल दिया। वास्तव में रेजीडेन्सी की लड़ाई का यह पहला मोर्चा था।

१६ सितंबर को हेवलाक ने गंगा को पार किया। उसी दिन उसे रेजीडेन्सी से इगलिस का मदेश मिला। अगद समाचार लाया था कि रेजीडेन्सी में क्रांतिकारी लगातार आक्रमण कर रहे थे, और खाद्य पदार्थ की कमी से चिंता-जनक स्थिति उत्पन्न हो गई थी।

मगरवारा में युद्ध हुआ। क्रांतिकारी टिक न सके, और वंशरीरतगज की ओर भाग निकले। उनके १२० सैनिक मरे और दो तोपें अंग्रेजों के अधिकार में आईं। उस रात्रि को

सत्तर

हेवलाक की सेना ने वशीरतगज में विश्राम किया। क्रान्तिकारी वशीरतगज के मोर्चे को छोड़कर पहले ही चल दिए थे। अगले दिन २२ मितवर को मूसलाधार वर्षा में हेवलाक की सेना सई नजी के किनारे आ पहुंची। क्रान्तिकारियों ने इस मोर्चे को छोड़ते समय पुल को न तोड़ कर विश्राम किया। अब वे लखनऊ से लगभग सोलह मील की दूरी पर थे। यहाँ उन्होंने तोपों के गोले इस आशय से छोड़े कि तोपों की आवाज रेजीडेन्सी के घरे में आए हुए व्यक्ति सुन ले, और उनमें नई आशा का संचार हो जाए। किंतु तोपों की आवाज घरे में आए हुए व्यक्ति सुन न पाए।

अगले दिन वर्षा रुक गई, किंतु बृष्ट और उमस थी। उबारी रुकी हुई थी। क्रान्तिकारियों की तोपें जो रेजीडेन्सी पर लगातार गोलाबारी कर रही थी, प्रातः काल से ही शान्त थी। ऐसा प्रतीत होता था कि आगामी युद्ध की संभावना का विचार कर तोपें नगर की रक्षा के लिए नए स्थानों को ले जाई जा रही थी। लखनऊ के क्रान्तिकारी हेवलाक और उदरम की सम्मिलित सेना का सामना करने के लिए अनर्बत शक्ति सँजो रहे थे।

क्रान्तिकारी आलमबाग में मोर्चा बनाए डटे थे। आलमबाग लखनऊ कानपुर मार्ग पर लखनऊ से पाँच मील की दूरी पर स्थित है। इसे अवध के अंतिम नवाब वाजिद अली शाह ने अपनी बेगमों के रहने के लिए बनवाया था।

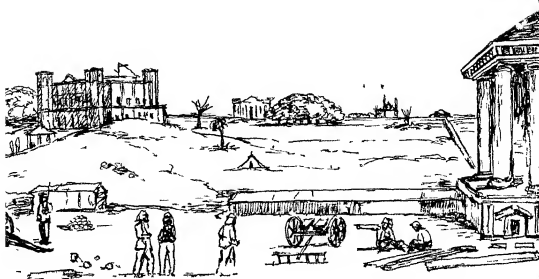
इकहतर

वर्षा के कारण सर्वत्र जल ही जल दीखता था। क्रांतिकारियों ने अपनी व्यूह-रचना में वारह सौ सैनिकों को सड़क के आर-पार फैलाया था। वहाँ पक्ष को आलमबाग और दाएँ पक्ष को दलदल के पीछे सुरक्षित रखा था। क्रांतिकारियों ने अग्रेजों के पहुँचते ही तोपों से गोले बरसाने शुरू किए।

प्रत्युत्तर में हेवलाक ने भी अपने तोपखाने को सामने किया और क्रांतिकारियों पर गोलावारी प्रारम्भ की। अग्रेजों का तोपखाना भारतीय तोपखाने की अपेक्षा अधिक सशक्त था, और अग्रेजों के पास तोपें भी सख्या में अधिक थीं।

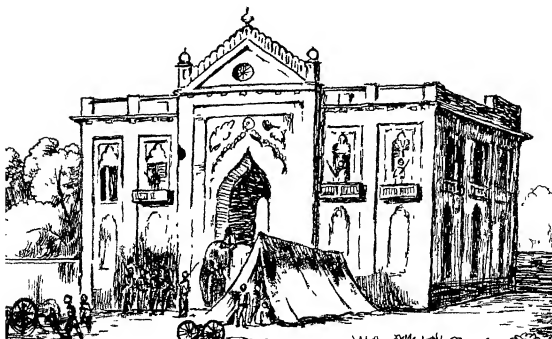
तोप के गोलों और बटूक की गोलियों की वौछार से कुछ हद तक सुरक्षा पाकर अग्रेज पैदल सेना आक्रमण के लिए आगे बढ़ी।

आलमबाग



क्रांतिकारी यह आशा नहीं करते थे कि अंग्रेज दलदल को पार कर उन पर आक्रमण करेंगे। किंतु हेवलाक ने क्रांतिकारियों को आश्चर्य में डाल दिया। उसके सैनिक दलदल को पार कर आक्रमण कर बैठे। जिस दलदल को वे दुर्भेद्य समझे बैठे थे, वह आसानी से पार कर लिया गया। अंग्रेज सिपाही सीने तक गहरे पानी को पार कर आक्रमण कर बैठे। क्रांतिकारियों के मध्य भाग में भी उसी समय साथ-साथ आक्रमण किया गया। अंग्रेजों के सशक्त तोपखाने

आलमबाग का मुख्य द्वार



ने क्रांतिकारियों की तोपों की मार को शांत कर दिया। क्रांतिकारियों की पैदल सेना ने आगे बढ़कर अंग्रेजों का सामना करने का प्रयास किया, किंतु तोपों की मार से बचने के लिए उन्हें भी लौटना पड़ा। आलमबाग की दीवारों का सहारा लेकर उन्होंने युद्ध किया, किंतु अंत में क्रांतिकारियों को आलमबाग छोड़ना पड़ा।

अंग्रेजों की घुड़सवार सेना ने क्रांतिकारियों का पीछा नहर के ऊपर चारबाग के पुल तक किया। इस नहर को नवाब गाजीउद्दीन हैदर ने बनवाया था। उसकी योजना यह थी कि गंगा के अतिरिक्त जल को गोमती नदी में इस नहर के द्वारा पहुँचाया जाए। तराई के एक तालाब से निकलने वाली गोमती नदी में बहुत कम जल रहता है। वह उसके जल की वृद्धि करना चाहता था किंतु नहर कुछ ही मील बन पाई। नगर के लिए कुछ सीमा तक वह सुरक्षा का साधन अवश्य बन गई। पुल पर क्रांतिकारियों ने डट कर सामना किया। हेवलाक वापस लौट आया, और उस रात्रि को अंग्रेजों ने आलमबाग में विश्राम किया।

अब अंग्रेजी सेना लखनऊ के सम्मुख थी। इसी समय समाचार मिला कि अंग्रेजों ने दिल्ली ले ली है। इस समाचार से अंग्रेजी सेना का मनोबल बढ़ा और उन्होंने दृढ़ संकल्प किया कि लखनऊ को ले लेना चाहिए। वाद में पता चला कि इस समाचार का कोई आधार नहीं था।

चौहत्तर

हेवलाक के सामने यह समस्या थी कि वह किस मार्ग का चयन करे कि कम-से-कम समय में रेजीडेन्सी पहुँच जाए, और उसकी सेना को न्यूनतम क्षति पहुँचे। जासूसों से उसे समाचार मिला कि सिकंदरबाग, शाहनजफ और मोती-महल खाली हैं। ये तीनों स्थान चहार दीवारी से घिरे थे और किले की भाँति सुरक्षित थे। क्रांतिकारियों ने नगर के बचाव के लिए यहाँ मोर्चे नहीं बनाए थे। केवल कैसरबाग में उन्होंने तैयारी कर रखी थी।

उदरम जो सन सत्तावन की क्रांति के पूर्व अवध का रेजीडेंट एव चीफ कमिश्नर रह चुका था, लखनऊ और

गोमती नदी के दक्षिण ओर स्थित महत्वपूर्ण भवनो का एक विहंगम दृश्य—शाहनजफ, मोतीमहल और छतरमजिल आदि।



उसके निकटस्थ क्षेत्र से भली भाँति परिचित था। उसने राय दी कि सबसे उचित मार्ग यह होगा कि चारवाग के पुल को पार कर, नहर के बाएँ किनारे बढ़ते हुए रेजीडेन्सी के पूर्व में स्थित महलो तक पहुँचा जाए।

२५ सितंबर को प्रातः काल अंग्रेजी सेना आलमवाग से आगे बढ़ी। सेना के अग्रिम दल का नेतृत्व उटरम तोपखाने के साथ कर रहा था। हेवलाक सेना के पिछले भाग के साथ था। वर्षा ऋतु के कारण मार्ग के दोनों तरफ लंबी घास उग आई थी। क्रांतिकारियों ने अपनी तोपें घास के अंदर छिपा रखी थी। ज्यों ही अंग्रेजी सेना आगे बढ़ी उस पर तोप के गोलों की मार पड़ी। दीवालों से घिरे वगीचों एवं मकानों से गोलावारी जारी रही, लेकिन अंग्रेजी सेना आगे बढ़ती रही और पुल तक पहुँच गई।

क्रांतिकारियों ने निश्चय किया कि पुल पर अंग्रेजों का जम कर सामना किया जाए। वहाँ उन्होंने ६ तोपें लगा रखी थी, और निकटस्थ मकानों से भी गोलावारी करने का प्रबंध कर रखा था। उन्होंने चारवाग की चहार दिवारी के पीछे भी कई तोपें लगा रखी थी। इस सम्मिलित मार से अंग्रेजी फौज आगे नहीं बढ़ सकी। वह रुक गई। उटरम ने एक टोली को लेकर चारवाग के अहाते से आक्रमण-कारियों को हटा दिया। इसी समय नील ने पुल पर स्थित क्रांतिकारियों की छ तोपों पर कब्जा कर लिया। अब

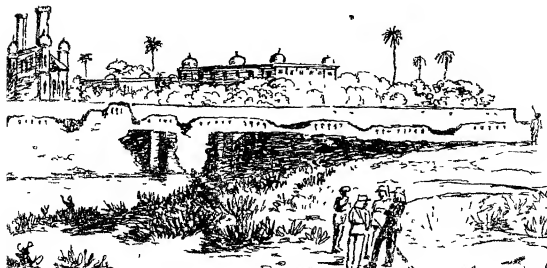
छिहत्तर

अंग्रेजों को तोप के गोलों की मार से छुटकारा मिल गया,
और उन्होंने पुल को पार किया।

नहर के किनारे-किनारे वाई ओर विना किसी विशेष रुका-
वट के बढ़ती हुई अंग्रेज सेना मोतीमहल पहुँची। मोती-
महल और रेजीडेन्सी की छ फर्लांग की दूरी में कई महल
एवं भवन थे। बेगम कोठी और अस्तबल पर अंग्रेजों को
रोकने का प्रयास किया गया, किंतु अंग्रेजों के तोपखाने की
मार के सामने वे टिक न पाए।

अब अंग्रेजों की सेना रेजीडेन्सी से केवल पाच सौ गज की
दूरी पर थी, और फरहतवख़श महल पर आ पहुँची थी।
अँधेरा होने लगा था। रेजीडेन्सी की ऊँचाई से घेरे में आए
हुए व्यक्ति आगे बढ़ती हुई सेना को देख रहे थे। वे अति

मोतीमहल



प्रसन्न थे कि घेरे के जीवन के अभावो से उनको छुटकारा मिल जाएगा। कुछ ईश्वर को धन्यवाद देने के लिए प्रार्थना करने लगे थे। मुक्तिदायिनी सेना के स्वागत के लिए सब उत्कण्ठित थे।

उटरम इस पक्ष में नहीं था कि रात्रि को ही रेजीडेन्सी पहुँचा जाए। वह चाहता था कि रात्रि को सैनिक छतर-मजिल में विश्राम करे। किंतु हेवलाक ने निश्चय किया कि विश्राम करना उचित न होगा। तुरत रेजीडेन्सी पहुँचना चाहिए। उसने उस मार्ग का चयन किया, जिसके दोनों तरफ मकान थे। मकान की दीवालों में बने छेदों से उन पर लगातार गोलावारी हुई। कदम-कदम पर सैनिक गिरने लगे। बचाव का कोई साधन न था। सड़कों में क्रांतिकारियों ने गहरी खाइयाँ खोद रखी थी। इसी समय कानपुर के हत्यारे नील के एक गोली लगी और वह मर गया।

अँधेरे में हेवलाक, उटरम और उसकी सेना रेजीडेन्सी पहुँची। ८८ दिन के पश्चात् रेजीडेन्सी में घिरे हुए व्यक्तियों को सहायता मिली, लेकिन आक्रमणकारियों की एक-चौथाई सेना भारी गई या घायल हुई। घनी आवादी से आक्रमण करना विवेकपूर्ण कार्य नहीं था। प्रत्येक घर से उन पर लगातार गोलियों की बौछार होती रही।

रेजीडेन्सी में खुशियाँ मनाई गई और ईश्वर को धन्यवाद

अठहत्तर

दिया गया कि आखिर सहायता आ ही गई, लेकिन यह सहायता भी कैसी सहायता थी। घेरे में आए हुए व्यक्ति पूर्वत घेरे में ही रहे। उद्धारक स्वयं घेरे में आ गए थे।

अब रेजीडेन्सी में उटरम और हेवलाक की सम्मिलित सेना के आने के कारण सैनिकों की संख्या बढ़ गई थी। अतः रेजीडेन्सी के वचाव की पुनर्व्यवस्था की गई। रेजीडेन्सी का पुराना क्षेत्र ब्रिगेडियर इगलिस के अधिकार में बना रहा।

हेवलाक उस विस्तृत क्षेत्र का संचालक बना जिसके अंदर कई महल आते थे, और जिन्हें क्रमशः क्रांतिकारियों से रेजीडेन्सी की सुरक्षा के हेतु सामरिक दृष्टि से छीन लिया गया था। नए सैनिक फरहतवख्श महल और छतर मजिल में रहने लगे थे। (छतर मजिल में आजकल ड्रग रिसर्च इस्टीट्यूट है।) ये दोनों महल रेजीडेन्सी से करीब-करीब मिले थे, और इनके चारों तरफ मजबूत चहार दीवारी बनी थी। नवाबों ने अपनी बेगमों के रहने के लिए छतर मजिल बनाई थी। फरहतवख्श महल क्लौड मार्टिन का महल था। उसने उसे नवाब सआदत अली खान को पचास हजार रुपये में बेच दिया था।

रेजीडेन्सी की सेना और आलमवाग की सेना का एक-दूसरे से किसी प्रकार का संबंध नहीं रह गया था। २ अक्टूबर को उटरम ने लिखा कि मैं नगर के एक भी व्यक्ति से किसी प्रकार का पत्राचार नहीं कर पाया हूँ। उटरम अवध राज्य

उनासी

मे रेजीडेण्ट रह चुका था और तत्पश्चात् अवध का चीफ कमिश्नर भी रहा था। अतः उसके लखनऊ एवं अवध के गण्यमान्य व्यक्तियों से व्यक्तिगत सबध थे। उसे आशा थी कि वह उन्हें प्रभावित कर पाएगा लेकिन क्रांतिकारियों ने नगर निवासियों को इतना आतंकित कर रखा था कि 'किसी की हिम्मत मुझ से पत्त-व्यवहार करने की नहीं हुई।' उसकी यह आशा कि उसके लखनऊ पहुँचने पर अवध की जनता में किसी प्रकार की प्रतिक्रिया होगी केवल निराशा मात्र ही रही।

रेजीडेण्टसी से छुडसवार सेना ने प्रयास किया कि घेरे को काटकर कानपुर निकल जाएँ, किंतु यह सभव नहीं हो पाया। भविष्य में घेरे को काटकर बाहर निकलने के प्रयास त्याग दिए गए। हेवलाक और उटरम जो रेजीडेण्टसी के मुक्तिदाता होकर आए थे, स्वयं घेरे में फँस गए। उन्होंने अपनी शक्ति को इस योग्य नहीं समझा कि वे घेरे को तोड़ कर बाहर निकल सकते।

रेजीडेन्सी का सफल मुक्ति प्रयास

हेवलाक और उटरम की सम्मिलित सेना के रेजीडेन्सी के घेरे में आने पर स्थित पहले जैसी ही रही। अंतर इतना ही था कि घेरे में आए हुए व्यक्तियों की संख्या बढ़ कर तिगुनी हो गई थी। सम्मिलित सेना घेरे से बाहर आ पाने में अपने को अममर्थ पा रही थी। वह स्वयं सकट में फँस गई थी।

भारत में अंग्रेजों का नया सेनापति कोलिन केपवेल आ गया था। वह एक योग्य सैनिक था, और क्रीमिया के युद्ध में प्रसिद्धि पा चुका था। उसने निश्चय किया कि वह स्वयं रेजीडेन्सी के घेरे में आई हुई सेना को मुक्ति प्रदान करेगा और अवध क्षेत्र को क्रांतिकारियों से विमुक्त करेगा। वह स्कॉटलैंड का रहने वाला था और उसके साथ कई स्कॉटलैंड के हाइलैंडर्स (पहाड़ियों) की सेनाएँ थी, जो

इक्कासी

अपनी वीरता के लिए आज भी प्रसिद्ध है। नेपाल के राणा जग बहादुर क्रांति के कुछ वर्ष पूर्व विलायत गए थे। उन्हें हाइलैंडर्स की एक सेना ने, जो अब लखनऊ में थी, सलामी दी थी। वे इन छ फुट लंबे जवानों की सेना से इतने प्रभावित हुए थे कि उन्हें खरीदने की इच्छा प्रकट की थी। उन्हें बताया गया था कि यह सेना स्वयंसेवकों की है, और उसे बेचा नहीं जा सकता। इनकी वर्दी में स्कर्ट होती है, जिसके कारण इन्हें भारतवासी घघरिया पलटन भी कहते थे। एक तत्कालीन अवधवासी ने एक हाइलैंडर्स से प्रश्न किया था कि क्या वे विलायत की रानी की हिजड़ा पलटन के सैनिक हैं। मुस्लिम युग में हिजड़े सैनिक विशेष रूप से हरमों की सुरक्षा के लिए रखे जाते थे। अचूक निशाने वाला वीर, जिसने रेजीडेन्सी के युद्ध में प्रसिद्धि पाई थी, स्वयं एक अफ्रीकी हिजड़ा था।

सर कोलिन केपवेल भी कानपुर से होता हुआ लखनऊ की ओर बढ़ा। उसकी सेना में एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं था जो कि लखनऊ एवं उसके निकटस्थ क्षेत्र से परिचित हो। अवध को अंग्रेजी राज्य में मिले केवल एक वर्ष हुआ था। अवध क्षेत्र के नक्शे न बन पाए थे। पथ-प्रदर्शक के अभाव में आक्रमणकारी सेना का आगे बढ़ना खतरनाक हो सकता था। भाग्यवश अंग्रेजों को ऐसा व्यक्ति मिल गया। केबेने रेजीडेन्सी में लिपिक का कार्य करता था। वह लखनऊ एवं

बयासी

उसके निकटस्थ क्षेत्र से भली भाँति परिचित था। उसने अपनी सेवा को पथ-प्रदर्शक के रूप में अर्पित किया। एक रात्रि को वह भारतीय भेप में रेजीडेन्सी से निकला, और कोलिन केपवेल के पडाव में जा पहुँचा। इस अभियान में केबेने सदैव सेनापति के साथ रहा और निरन्तर पथ-प्रदर्शन करता रहा।

दस नवंबर १८५७ को केबेने सेनापति से मिला। सेनापति ने उसे अपनी आक्रमण योजना बताई। एक बात उसने निश्चयपूर्वक कही कि हेवलाक के मार्ग चयन की गलती फिर दुहराई नहीं जानी चाहिए। उन्हें ऐसा मार्ग चुनना चाहिए जहाँ आवादी न हो। लखनऊ का प्रत्येक मकान क्रांतिकारियों से भरा था। केपवेल ने अपने अभियान को तीन भागों में विभाजित किया।

सर्वप्रथम उन्हें आलमवाग पहुँचना था, जहाँ कि अग्रेजी सेना की चौकी थी, और रेजीडेन्सी से वे सकेतो द्वारा बातचीत कर सकते थे। सेनापति का विचार था कि आलमवाग में तबू तथा भारी सामान छोड़ दिया जाए, ताकि सेना तेजी से आगे बढ़ सके।

इसके पश्चात् वह आलमवाग से नगर के बाहर एक लवा चक्कर लगाकर दिलकुशा पहुँचेगा। दिलकुशा में वह अपनी गाड़ियाँ और सामान ले जाने वाले पशुओं को छोड़

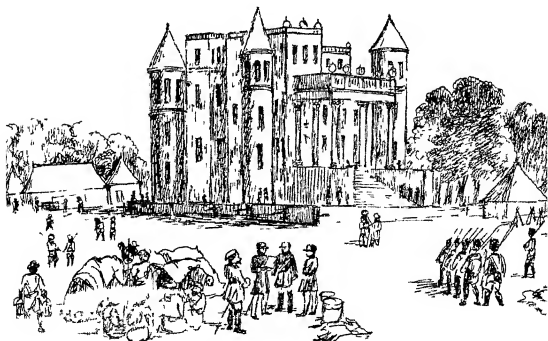
तिरासी

देगा । अब वह लखनऊ नगर की सीमा पर होगा । रेजीडेन्सी
यहाँ से लगभग तीन मील की दूरी पर है । दिलकुशा से ला
मार्टिनियर कालेज, सिकंदरबाग और शाहनजफ होता
हुआ वह रेजीडेन्सी पहुँचेगा ।

अभियान का तीसरा और अंतिम भाग रेजीडेन्सी के घेरे
में आए हुए व्यक्तियों को सही सलामत दिलकुशा पहुँचा
देना था ।

सर कोलिन केपवेल का पहला पड़ाव ऊँची दीवार से घिरे

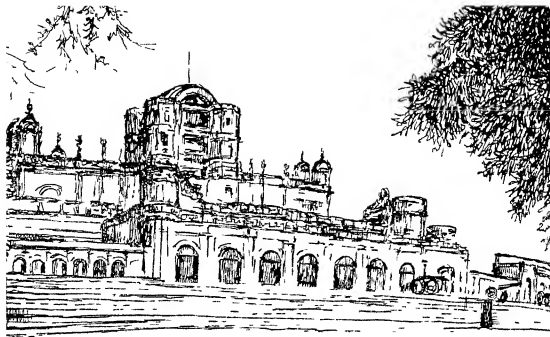
दिलकुशा महल



आलमबाग मे था, जहाँ अंग्रेजी सेना के ग्यारह सौ व्यक्ति उत्सुकता से उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। १३ नवंबर की रात्रि को रेजीडेन्सी की छत पर कोलतार के एक पीपे में आग लगाई गई। उसकी ऊँची उठती हुई लपटों के माध्यम से आलमबाग में एकत्र सेना को सूचना दी गई थी कि रेजीडेन्सी के सैनिक आने वाली लड़ाई के लिए तैयार हैं, और अपना कर्तव्य निवाहेगे। उसके उत्तर में आलमबाग से भी नीली रोशनी दिखाई गई। इसने रेजीडेन्सी के घेरे में आए हुए व्यक्तियों में नई आशा का संचार किया था।

आलमबाग से केपवेल की सेना नगर के बाहर लंबा चक्कर लगाकर दिलकुशा पहुँची। दिलकुशा शब्द के अर्थ हैं 'चित्त को प्रसन्न करने वाला'। दिलकुशा का निर्माण तीन वर्ग मील विस्तृत जंगल के मध्य किया गया था। यहाँ नवाब शिकार खेलने के लिए आते थे। मार्ग में उन्हें किसी प्रकार की रुकावट नहीं मिली। दिलकुशा पर क्रांतिकारियों का अधिकार था, लेकिन वे सीमित संख्या में ही वहाँ थे।

जब अंग्रेजों की सेना दिलकुशा के समीप पहुँची, तो क्रांतिकारियों ने अपनी छ छिपी हुई तोपों से उन पर गोलाबारी की। अंग्रेजों ने भी गोलाबारी की, और एक घंटे के अंदर दिलकुशा ले लिया। क्रांतिकारियों ने ढालू भूमि को पार कर ला मार्टिनियर कालेज में जाकर शरण ली। दिलकुशा की सुरक्षा के लिए केपवेल ने बारह सौ सैनिकों को वहाँ



ला मार्टिनियर कालेज

चौकसी रखने के लिए छोड़ा ।

अंग्रेजों ने क्रांतिकारियों का पीछा किया और उनको ला मार्टिनियर कालेज से हटा दिया । यह भवन कालेज बनने के पूर्व फ्रांसिसी 'क्लौड मार्टिन' का निवास स्थान था । मरते समय उसने इस भवन और अपनी संपत्ति का एक ट्रस्ट बनाया, जो इस कालेज को चलाता है । पूर्व योजना के अनुसार सब तबू एव भारी सामान दिलकुशा में छोड़

छियासी

दिया गया था, अतः उस रात्रि को सैनिक अपने ओवर कोटो को पहने हुए, हथियार वगल में दबाए हुए, जमीन पर डूँबी सो गए। रात्रि को रेजीडेन्सी के निवासियों ने नीली रोशनी को अधिक निकट देखा। आज वह ला मार्टिनियर कालेज की छत से टिमटिमा रही थी। पास ही केबने छत के ऊपर आग जला रहा था। सकेतो द्वारा यह तय हो गया था कि यदि आग जलने का सकेत मिले, तो समझ लेना चाहिए कि अगले दिन प्रातः काल रेजीडेन्सी की सेना को घेरे से निकल कर मार्ग के मकानों को ले लेना है। इस प्रकार रेजीडेन्सी के व्यक्ति अधिक से अधिक सुरक्षापूर्वक रेजीडेन्सी खाली कर दिलकुशा पहुँच सकते थे।

अगले दिन प्रातः काल सैनिकों को चाय के साथ तीन दिन का राशन दिया गया। इसके यह अर्थ थे कि अगले तीन दिन बहुत ही अनिश्चित होंगे, भोजन की व्यवस्था की भी संभावना कठिनता से ही होगी, और युद्ध भी कितने समय तक चलेगा और कैसा रूप ले लेगा, यह भी नहीं कहा जा सकता था। हर समय सैनिक को युद्ध के लिए तैयार रहना था। सैनिकों को सचेत किया गया कि चूँकि लड़ाई घिरे हुए स्थानों में होगी अतः बारूद का प्रयोग कम से कम किया जाए। पास की लड़ाई में जिसमें हाथापाई की अधिक संभावना थी, शत्रु एव मित्र, दोनों पक्ष समान रूप से घायल हो सकते थे। सर कोलिन कैंपबेल ने सिपाहियों को यह आदेश दिया—

सतासी

“सिपाहियो ! तुम्हे कठिन कार्य करना है। जहाँ तक सभव हो तीन-तीन सैनिक साथ-साथ रहे। घिरे हुए स्थानों में पहुँचते ही सगीनों का प्रयोग करो। मध्यवर्ती सैनिक को सगीन से आक्रमण करना चाहिए, और उसके दाएँ बाएँ वाले सैनिकों को उसकी सहायता करनी चाहिए। किलेबंदी के अंदर बंदूक की गोलियाँ न चलाई जाएँ, क्योंकि उससे अपने पक्ष के लोग भी घायल हो सकते हैं।”

नहर को पार कर गोमती नदी के दाएँ किनारे एक मील चलकर अंग्रेजी सेना बाईं ओर घूम कर सिकंदरबाग पहुँची। सुबह के नौ बजे थे। नदी के किनारे कुहरा छाया हुआ था। अंग्रेजों को मार्ग में किसी प्रकार की रुकावट नहीं मिली। सँकरे मार्ग के दोनों तरफ मिट्टी की दीवालें थी, जो आम के वगीचों की घेरेबंदी थी। यह अंग्रेजी सेना का भाग्य ही था कि मार्ग के किनारे की दीवालें के पीछे क्रांतिकारियों ने किसी प्रकार का प्रबन्ध नहीं किया था। सिकंदरबाग के चारों तरफ एक बीस फुट ऊँची मजबूत दीवाल थी, और उसका क्षेत्रफल १५० वर्ग गज था। केपवेल की सेना और रेजीडेन्सी के मध्य यह क्रांतिकारियों की एक महत्वपूर्ण चौकी थी।

सिकंदरबाग में दो हजार चुने हुए वीर क्रांतिकारी एकत्र थे। उसकी दीवालें में प्रति गज की दूरी पर छेद थे, जहाँ से आक्रमणकारियों पर गोलावारी की जा सकती थी। घेरे

अठासी

के अंदर कुछ दुमजिले मकान थे, जहाँ से शत्रु पर दूर-दूर तक मार की जा सकती थी। क्रांतिकारियों ने निश्चय किया था कि वे अत समय तक लड़ते रहेंगे। मर भले ही जाएँ किंतु भागेगे नहीं।

जब क्रांतिकारियों ने अंग्रेज फौज देखी तो उन्होंने उस पर तोप और बंदूको से गोलाबारी की। अंग्रेज सिपाही यत्न तब गिरने लगे, अत उनको लेटने की आज्ञा दी गई। अंग्रेजों की तोपों से भी सिकंदरबाग की दीवाल को तोड़ने के लिए गोलाबारी की गई, लेकिन उस पर कोई विशेष असर नहीं हुआ। अकस्मात् एक अंग्रेज सिपाही को दीवाल में प्रवेश करने योग्य एक दरार दिखाई दी। अंग्रेज सेना उससे प्रवेश कर गई। अब क्रांतिकारियों और अंग्रेज सैनिकों में सगीन और तलवार का भयंकर युद्ध हुआ। न दया की भीख माँगी गई और न किसी को उसकी आशा ही थी। प्रत्येक क्रांतिकारी अपने स्थान पर लड़ता हुआ मारा गया। घायल और धराशायी क्रांतिकारियों में इतना जोश था कि उन्होंने अंग्रेज सैनिकों से कहा कि यदि हम उठ पाते तो तुम्हें मार डालते। क्रांतिकारियों की लाशें इस प्रकार पट गई थी कि एक के ऊपर एक, उनकी ऊँचाई चार फुट तक हो गई थी। अवध क्षेत्र की यह सबसे भयंकर लड़ाई थी, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अपने स्थान पर लड़ता हुआ मारा गया। जहाँ पर वह था वही डटा रहा, हटा नहीं।

नवासी

सिकंदरबाग के बीच में पीपल का एक घना वृक्ष था। उसके नीचे पानों से भरे मिट्टी के कई मटके रखे थे। मार-काट के पश्चात् अंग्रेज सैनिक अपनी प्यास बुझाने के लिए पीपल के वृक्ष के नीचे आए। वहाँ उन्हें ठंडा जल और ठंडी छाँह दोनों मिले। कैप्टन डौसन ने देखा कि पेड़ के नीचे कई मृत अंग्रेज सैनिक पड़े हैं। उनके घावों का निरीक्षण कर वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा, कि वे सब किसी ऊँचे स्थान से गोली चलाकर मारे गए थे। उसको सदेह हुआ कि पीपल के पेड़ पर छिप कर कोई व्यक्ति गोली चला रहा था। उसने उस वृक्ष का निरीक्षण करवाया। एक व्यक्ति वहाँ छिपा बैठा था। उस पर निशाना लगाया गया, और वह वृक्ष से लुढ़क पड़ा। वह एक वीरागना थी जो लाल जैकेट और गुलाबी पैजामा पहने हुए थी। उसके पास दो पिस्तौलें थी। उसने आधा दर्जन से अधिक अंग्रेज सैनिकों को मार डाला था।

सिकंदरबाग से रेजीडेन्सी की ओर केवल पाँच सौ गज की दूरी पर शाह नजफ है। यह नवाब गाजी उद्दीन हैदर का मकबरा है। उसके चारों तरफ एक मजबूत दीवार थी। दीवार के चारों तरफ मिट्टी के कच्चे मकान थे। दोपहर का समय था। कॅप्टन की यह इच्छा थी कि गोधूलि बेला तक शाह नजफ को भी ले लिया जाए। अंग्रेजों ने शाह नजफ की दीवार पर गोलावारी प्रारंभ की। गोमती नदी

के पार से क्रांतिकारियों ने भी अंग्रेज आक्रमणकारियों पर गोलाबारी शुरू की ।

शाह नजफ की रक्षा करने वालों में कुछ तीरदाज भी थे, जो धनुष और बाण का प्रयोग कर रहे थे । यह देखकर विस्मय होता है कि जिस युग में इनफील्ड रायफल का प्रयोग होता था, उस युग में तीर और कमान का भी प्रयोग हो रहा था । उनके तीर बड़े वेग एवं शक्ति से सही निशाने पर बैठते थे । एक सिपाही ने अपना आँखों देखा हाल इस प्रकार लिखा है—उसके समीप एक सिपाही के सिर को भेदता हुआ तीर सिर के पीछे एक फुट बाहर निकल गया । दूसरे सिपाही के दिल को छेदता हुआ तीर छ. गज पीछे जमीन पर गिर पड़ा । सिपाही तडपा और तुरंत मर गया ।

अंग्रेजों पर शाह नजफ और नदी के पार से गोलाबारी हो रही थी । तीन घंटे की गोलाबारी का भी शाह नजफ की मजबूत दीवालों पर कोई असर नहीं पड़ा था । दीवाल के चारों तरफ की झोपड़ियों को जला दिया गया था । अंग्रेजी सेना ने दीवाल पर चढ़कर आक्रमण करने की सोची, लेकिन क्रांतिकारियों ने उन पर ईंट, खौलता पानी, तेल में भीगे हुए जलते कपड़े डालकर वार किया और अंदर नहीं आन दिया । केपवेल ने सिपाहियों को इन शब्दों में ललकारा—
“सैनिकों, याद रखो । रेजीडेन्सी के अंदर औरत और बच्चों का जीवन सकट में है । उनको बचाना आवश्यक है । प्रश्न यह नहीं उठता है कि तुम रेजीडेन्सी को ले सकते हो

इक्क्यानवे

या नहीं। उसे तुम्हें हर हालत में लेना है।”

अकस्मात् शाह नजफ में बिगुल बजा। उसका अर्थ था कि स्थान छोड़ कर कूच कर दो। अंग्रेज सशय में पड़ गए कि इसका क्या अर्थ है। इसमें कोई चाल तो नहीं है? शाह नजफ की किलेबंदी के अंदर सुरक्षित सेना ब्यो कर वहाँ से हटने लगी। लेकिन कुछ समय पश्चात् गोलाबारी भी बढ़ हो गई। इससे अंग्रेजों को विश्वास हो गया कि बिगुल का बजना कोई चाल न थी, वरन् वास्तविकता थी। बात यह थी कि शाह नजफ में क्रांतिकारियों ने पर्याप्त मात्रा में बारूद एकत्र कर रखा था, और उन्हें भय हो गया था कि तोप के गोलों के लगातार आक्रमण से यदि बारूद में आग लग गई, तो वे भी उसमें भुन जाएँगे।

प्रश्न यह उठता है कि ब्यो क्रांतिकारी बारूद के ढेर को छोड़ कर चले गए, यदि एक क्रांतिकारी वहाँ रुक जाता, और अंग्रेज सेना के अंदर आने पर विस्फोट कर देता तो सैकड़ों अंग्रेज सैनिक मर जाते।

१७ नवंबर को रेजीडेन्सी में यह संदेश प्रसारित किया गया—

“कल रावि १८ नवंबर को प्रत्येक व्यक्ति को रेजीडेन्सी छोड़ना है। अपने साथ उतना ही सामान ले जा सकते हैं, जितना कि स्वयं ले जा सकें।”

जिस समय कोलिन केपवेल सिकंदरवाग में लड़ रहा था,

ब्रानवे

उस समय हेवलाक रेजीडेन्सी और शाह नजफ के मध्य की क्रांतिकारी चौकियों पर कब्जा कर रहा था। अब रेजीडेन्सी खाली करने वालों के लिए रेजीडेन्सी से दिलकुशा तक सुरक्षित मार्ग बन गया था। मार्ग को अधिक सुरक्षित बनाने के लिए सब प्रकार की सावधानियाँ वरती गई थी। खुले हुए स्थानों को कनातों से ढक दिया गया था, ताकि निशाने वालों से रेजीडेन्सी छोड़ने वाले बच सकें। ऊँची सड़कों में खाइयाँ खोद दी गई थी। स्त्रियों को डोलियों से उतरकर, खाइयों को पैदल पार करना पड़ा था। यह तय किया गया था कि पहले महिलाएँ, बच्चे और घायल दिलकुशा पहुँचा दिए जाएँगे। इसके पश्चात् रेजीडेन्सी की पुरानी सेना ब्रिगेडियर इगलिस के साथ रवाना होगी। नदी के किनारे के स्थानों से हेवलाक की सेना इगलिस की सेना से आ मिलेगी। वे मोतीमहल की अग्रिम चौकी को पार कर शाह नजफ में रुक जाएँगे। कैप-वेल सिकदरबाग में अपने तोपखाने और पैदल सेना के साथ तैयार रहेगा। यदि क्रांतिकारियों ने रेजीडेन्सी से निकलने वालों का पीछा किया तो वह उनके प्रयास को विफल करेगा, और तब तक चौकसी करेगा, जब तक कि आखिरी आदमी सहो सलामत दिलकुशा न पहुँच जाए।

२२ नवंबर को रेजीडेन्सी की पुरानी सेना ने अर्धरात्रि को रेजीडेन्सी से प्रस्थान किया। क्रांतिकारियों को सशय न हो कि रेजीडेन्सी खाली की जा रही है, इसीलिए सब मकानों

तिरानवे

मे मोमबत्ती एव लालटेने जलती हुई छोड़ दी गई थी ।
इगलिस रेजीडेन्सी की पुरानी सेना का कमांडर था ।
उसने इसे अपना विशेषाधिकार समझा कि उसे ही सबसे
बाद रेजीडेन्सी को छोड़ने का श्रेय मिलना चाहिए । कहा
जाता है कि उटरम ने मुस्करा कर अपना हाथ इगलिस
की ओर बढ़ाया और कहा—“हम साथ-साथ निकले ।”

इस पर इगलिस ने कहा—“श्रीमान, आप मुझे अपने
मकान के दरवाजे को बद करने की आज्ञा देंगे ।”

लेकिन रेजीडेन्सी से सबसे बाद में निकलने वाला व्यक्ति
इगलिस नहीं कैप्टन वाटरमैन था । जब रेजीडेन्सी
खाली की जा रही थी, तो वह सोता रह गया था । नींद
खुलने पर वह अपना होश-हवास खो बैठा । लेकिन
भाग्यवश कुछ दूरी पर उसे आखिरी टोली के व्यक्ति जाते
दीखे, दौड़ कर वह उनके साथ हो लिया ।

यह कहा जाता है कि रेजीडेन्सी से भूखे लोग जब दिलकुशा
पहुँचे थे तो उन्होंने एक ही दिन में बीस दिन का राशन
चट कर दिया था ।

रेजीडेन्सी पर ३० जून को घेरा डाला गया था और २२
नवंबर को पाँच माह पश्चात घेरे में आए हुए व्यक्तियों
को छुटकारा मिल पाया था । लेकिन अभी लखनऊ नगर
और अवध का क्षेत्र क्रांतिकारियों के पूर्ण अधिकार में था ।
सर कलिन केपवेल को अभी बहुत कुछ करना बाकी था ।

चौरानवे

सिंहावलोकन

हेवलाक और उटरम की सम्मिलित सेना, २२ नवंबर को रेजीडेन्सी से बाहर निकलने में सफल हुई थी। इसके दो माह पूर्व अंग्रेजों ने दिल्ली भी ले लिया था। इन दो घटनाओं ने सन '५७ की क्रांति को नया मोड़ दिया। अब तक क्रांतिकारी अंग्रेजों की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली थे, किंतु अब अंग्रेजों का पलड़ा भारी पड़ने लगा। उनको निरंतर विलायत से सैनिक सहायता मिलने लगी।

अवध के क्रांतिकारी निश्चय ही चिनहट के युद्ध के पश्चात् रेजीडेन्सी को ले सकते थे, लेकिन वे समय के महत्व को समझ न पाए। क्रांतिकारी युद्ध को खींचते रहे। उनको इस बात का आभास नहीं हो पाया कि युद्ध जितनी जल्दी खतम हो जाएगा उनकी विजय की उतनी ही अधिक संभावना होगी। वे यह समझ नहीं पाए कि जितना ही

पचानवे

अधिक समय खिचता जाएगा उतनी ही अधिक अंग्रेजों की शक्ति भी बढ़ती जाएगी ।

यदि अवध के क्रांतिकारी नेता दूरदर्शी होते और उनका दृष्टिकोण अखिल भारतीय होता तो रेजीडेन्सी के पश्चात उनको कानपुर के क्रांतिकारियों को सहयोग देना चाहिए था । लेकिन अवध के क्रांतिकारियों को लखनऊ के अतिरिक्त न कुछ दिखा और न कुछ सूझा । कानपुर से ही तो उनको दवाने के लिए अंग्रेजी फौज आती । यदि कानपुर और लखनऊ के क्रांतिकारियों की सहयोजना होती तो वे हेवलाक को चक्की के दो पाटों के बीच के दानों की भाँति कभी भी पीस सकते थे । उनको केवल एक साथ हेवलाक पर दोनों तरफ से आक्रमण करना था—कानपुर के क्रांतिकारियों को पीछे से और लखनऊ के क्रांतिकारियों को आगे से ।

सर कोलिन केपवेल रेजीडेन्सी के घेरे में आए हुए व्यक्तियों को छुटकारा दिलाने में सफल हुआ था । घेरे से निकाल कर उसने उन्हें आलमबाग पहुँचा दिया था । यहाँ लगभग चार हजार सैनिकों की छावनी थी । इस समय केपवेल को कानपुर से समाचार मिला कि ताँतिया टोपे के नेतृत्व में ग्वालियर की सेना सक्रिय हो रही है । वह उतरम को आलमबाग छोड़कर कानपुर की ओर रवाना हुआ ।

इस समय आलमबाग की अवध में लगभग वही स्थिति हो

छानवे

गई थी, जो पहले रेजीडेन्सी की थी। रेजीडेन्सी के घेरे से अंग्रेज बाहर निकल आए थे। किंतु आलमबाग में भी वे पूर्णतया सुरक्षित नहीं थे। आलमबाग में क्रांतिकारियों ने कई आक्रमण किए थे। स्वयं हजरत महल ने भी एक बार अपने नेतृत्व में उस पर आक्रमण किया था। मौलवी अहमदउल्लाह शाह ने भी उसको लेने के कई प्रयत्न किए थे, लेकिन विफल रहा था। क्रांतिकारियों के लिए यह महत्वपूर्ण था कि कोलिन केपवेल के लौटने से पूर्व ही आलमबाग की सेना को नष्ट कर दिया जाए। उसके पहुँचने पर अंग्रेजों की शक्ति दुगुनी हो जाती किंतु क्रांतिकारी आलमबाग को लेने में सफल नहीं हुए।

आलमबाग की चौकी कोलिन केपवेल की अग्रिम चौकी का महत्व रखने लगी थी। ताँतिया टोपे से निपट कर उसे पुनः लखनऊ वापस लौटना था। अभी नगर क्रांतिकारियों के हाथ में था, और संपूर्ण अवध में यत्न तत्न क्रांतिकारियों का जमघट था।

दिसंबर के प्रारंभ में कोलिन केपवेल लखनऊ की ओर रवाना हुआ। जग बहादुर की गोरखा सेना भी उसकी मदद के लिए आ पहुँची थी। हेनरी लारेन्स के भाई जॉन लारेन्स ने पजाब से भी सेना भेज दी थी। पजाब को अंग्रेजी शासन में आए केवल छः वर्ष हुए थे, लेकिन जॉन लारेन्स ने वहाँ ऐसा जनप्रिय शासन स्थापित किया था कि सिख अंग्रेजों



लखनऊ नगर पर अंग्रेजों का कब्जा हो जाने के बाद लगभग ९००० क्रांतिकारियों ने बेगम हजरतमहल और फैजाबाद के मौलवी के नेतृत्व में मूसाबाग की मोर्चेबंदी की थी। सर जेम्स डटरम इस पर १९ मार्च १८५८ के पहले कब्जा न जमा सका। और कब्जा करने पर उसके हाथ केवल इमारत आई, क्रांतिकारी नहीं।

के परम मित्र बन गए थे। अब अंग्रेजी सेना में सैनिकों की कमी न रह गई थी। केपवेल पहली मार्च '५८ तक लखनऊ नगर पर पूर्ण अधिकार करने में सफल हुआ था। अवध में अठानवे

लडाई चलती रही, क्योंकि क्रांतिकारियों की टोलियाँ जगह-जगह बिखरी लड़ती रही ।

लखनऊ-विजय के पश्चात् लूट मार प्रारम्भ हुई । प्रत्येक विजित नगरी की भाँति लखनऊ भी श्रीविहीन हो गई थी । अधिकांश संपन्न लोग तो पहले ही नगर छोड़ कर चले गए थे । अंग्रेज, सिख और गोरखे सिपाहियों ने तो उसे लूटा ही, साथ ही नगर के लुच्चे और लफंगो ने भी लूट में पूरा भाग लिया । नगर में नाटकीय दृश्य होने लगे थे । जिसकी समझ में जो आया उसने वही किया । मनुष्यों में किसी प्रकार का नियन्त्रण नहीं रह गया ।

युद्ध काल में कई घरों से दरवाजा बंद करके लोग लड़े थे । इन घरों में बारूद की बोरियों को दियासलाई दिखाकर अदर फेंक दिया जाता था । भुनी और जली हुई लाशें वही सड़ती रही थी । नगर में भयकर दुर्गन्ध फैल गई थी । कई सहस्र व्यक्ति नगर की सफाई करने एवं घरों से मुर्दे निकालने में लगाए गए थे । लखनऊ नगर एवं उसके समीप के क्षेत्र में मनुष्य, घोड़ों, गधों आदि की लाशें सड़ती रही, और मक्खियों के कारण जीना कठिन हो गया ।

युद्ध का अन्त हो गया था, लेकिन युद्धजनित घृणा एवं अत्याचारों के प्रतिफल बदला लेने का दूसरा दौर प्रारम्भ हो गया था । अंग्रेज विजयी हो गए थे । उनके हाथ में शक्ति

निम्नान्वे

थी। उन्होंने दोषी एव निर्दोष व्यक्तियों में किसी प्रकार का अंतर नहीं रक्खा। जो मिला उसे फाँसी पर लटका दिया। गाँव के गाँव जला दिए गए। न स्त्री, न पुरुष और न वच्चो का ही विचार किया गया। इन अत्याचारों के फलस्वरूप भारतवासियों एव अंग्रेजों में स्थायी वैमनस्य हो गया। दोनों जातियों ने एक दूसरे का विश्वास छोड़ दिया। उनमें कटुता बनी रही। इसका अंत तभी हुआ जब भारत स्वतंत्र हो गया।

कई जमींदार नवाबी व्यवस्था में स्वयं छोटे-मोटे नवाब के सदृश्य थे। अपनी रय्यत पर उनका अपरिमित प्रभाव था। क्रांति में भाग लेने के फलस्वरूप वे राजा से रक हो गए थे। उनकी जमींदारियाँ छीन ली गई थी, और उन लोगों को दे दी गई थी जिन्होंने अंग्रेजों का साथ दिया था। इस प्रकार अवध में अंग्रेजों के पिटू एक नए जमींदार वर्ग का सृजन हुआ।

अवध की क्रांति का वास्तविक नेता एव सेनानी मौलवी अहमदउल्लाह शाह था। अवध में वह अंग्रेजों से निरंतर लड़ता रहा, और जब अंग्रेजों ने अवध पर अधिकार जमा लिया, तो वह रूहेलखंड जा पहुँचा। वहाँ भी उसने स्वतंत्रता संग्राम का संगठन किया। अवध के वीर सेनानी अहमदउल्लाह शाह का विश्वासघात पूर्वक वध कर दिया गया। चिनहट के युद्ध में बरकत अहमद ने सर हेनरी

सौ

लारेन्स को बुरी तरह हराया था। लेकिन यह आश्चर्य का विषय है कि आगे चलकर बरकत अहमद के सद्गुण सुयोग्य एव दक्ष सैनिक को किसी महत्वपूर्ण सैनिक अभियान का संचालन करने का अवसर नहीं दिया गया। बेगम हजरत महल ने नेपाल में जाकर शरण ली।

अंग्रेजी पक्ष के उल्लेखनीय सेनानायक हेवलाक, उटरम, सर हेनरी लारेन्स एव सर कोलिन केपवेल थे। हेवलाक की कब्र आलमबाग और सर हेनरी लारेन्स की कब्र रेजीडेन्सी में है। हेवलाक युद्धजनित परिश्रम एव वीमारी से मरा। सर हेनरी लारेन्स गोले की मार से वीर गति को प्राप्त हुआ था। 'कानपुर का कसाई' नील भी रेजीडेन्सी में घुसते समय एक गोली का शिकार हुआ। हडसन, जिसने बहादुर शाह के दो लड़कों को गोली से मारा था लखनऊ में मारा गया। केबेने ने सर कोलिन केपवेल के अभियान में पथ-प्रदर्शक का कार्य किया था। उसे वीरता के सबसे बड़े पदक विक्टोरिया क्रॉस से विभूषित किया गया, और युद्ध के पश्चात वह सिविल जज बना दिया गया।

कंपनी के शासन का अंत हुआ। १ नवंबर १८५८ को ब्रिटेन की सम्राज्ञी ने भारत का शासन अपने हाथ में लिया। यह जौन कंपनी का मृत्यु दिवस था। स्वयं ब्रिटेन की पार्लियामेंट के सीधे संरक्षण में भारत का शासन प्रारंभ हुआ।

युद्ध के फलस्वरूप लखनऊ रेजीडेन्सी खडहर हो गई थी।

एकसौ एक

यह तब से उसी दशा में है, और सन '५७ की क्रांति की याद दिलाती है। यह भारत सरकार की एक सरक्षित इमारत है, और अपना ऐतिहासिक महत्व रखती है।

जब भी तुम्हें अवसर मिले, तुम लखनऊ जाओ और वहाँ की इस प्रसिद्ध इमारत को अवश्य देखो। रेजीडेन्सी में तुम्हें सन सत्तावन की क्रांति से संबंधित अनेक चित्र, फोटो, नक्शे आदि मिलेंगे। उनकी सहायता से तुम्हें उस इतिहास को समझने में मदद मिलेगी जो तुमने इस पुस्तक में अभी पढ़ा।

रेजीडेन्सी के खडहरो से यदि तुम दोस्ती कर सको तो वहाँ की एक-एक ईंट तुम्हें अपनी कहानी बताएगी। दिखाएगी तुम्हें वह तस्वीर जो उसने अपनी आँखों से देखी थी। सुनाएगी तुम्हें वह दास्तान जो वीरता, बर्बरता और देशप्रेम से पगी हुई है।

सन '५७ की क्रांति के ठीक सौ वर्ष पश्चात् रेजीडेन्सी की निचली भूमि में गोमती के किनारे, स्वतंत्र भारत ने सगमरमर का एक स्तंभ उन क्रांतिकारियों की याद में बनवाया है जिन्होंने अपना जीवन भारत की स्वतंत्रता के लिए अर्पित किया था। सगमरमर के स्तंभ पर आलेख है—

एकसौ दो